vinoba

भूदान-यज्ञ

भूदान-यज्ञ मूलक ग्रामोद्योग प्रधान अहिंसक क्रान्ति का सन्देशवाहक – साप्ताहिक

सर्व सेवा संघ का मुख पत्र

वर्ष : १५ अंक : १०

सोमवार ९ दिसम्बर, '६८

अन्य पृष्ठों पर

"गवर्नमेंट को कैसे समझाया जाय ?"...
खादी-कार्यकर्ताओं के खिलाफ बगावत
—सिद्धराज ढड्ढा ११४

किस गांधी की जन्म-शताब्दी ?

टिकट ! टिकट ! —सम्पादकीय ११५

मुक्ति के मार्ग में पाप से अधिक पुण्य बाधक —विनोबा ११७

श्रमिक-आन्दोलन : गतिरोध के बाद ?
—नरेन्द्र कुमार दुबे ११९

महान क्रान्तिकारी पं० परमानन्दजी
—रामचन्द्र राही १२१

बिहार के ग्रामदानी गाँव
—जितेन्द्र सिंह १२२

क्रान्तिकारी की मशाल जलती रहेगी
—सुन्दरलाल बहुगुणा १२५

आन्दोलन के समाचार १२६

बिहारदान की वर्तमान स्थिति १२८

सम्पादक
राममूर्ति

सर्व सेवा संघ प्रकाशन
राजघाट, वाराणसी–१, उत्तर प्रदेश
फोन : ४२८५

जनता के सेवकों के लिए दो जरूरी बातें

जो किसान सूरज की तेज धूप में कमर झुकाकर खेतों में काम करते हैं, उनके साथ हमें अपना तादात्म्य स्थापित करना चाहिए और देखना चाहिए कि जिन तालाबों में वे नहाते हैं, अपने कपड़े धोते हैं, बर्तन साफ करते हैं, उनके पशु पानी पीते हैं और पड़े रहते हैं, उन तालाबों का पानी हमें पीना पड़े तो कैसा लगेगा ? हम ऐसा कर पायें तभी, हम सचमुच जनता का प्रतिनिधित्व कर पायेंगे और जनता हमारी हर पुकार पर हमारे साथ चलने को तैयार मिलेगी ।१

अब तक गाँवों के लोग हजारों की तादाद में मरते रहे हैं, ताकि हम जिन्दा रह सकें। अब हमें मरना पड़ सकता है, जिससे कि वे जिन्दा रह सकें। किसान अपनी नाजानकारी में और अनिच्छा के साथ मरते रहे हैं। उनकी मजबूरी में किये गये बलिदान से हमारी प्रतिष्ठा गिरी है। अब अगर हम इच्छा-पूर्वक समझ-बूझकर मरते हैं तो हमारा बलिदान हमें ऊपर उठायेगा और इससे पूरा राष्ट्र ऊपर उठेगा ।२

इस तरह के सब मामलों में लागू होनेवाला एक अनमोल सिद्धान्त यह है कि जो चीज लाखों लोगों को नसीब नहीं है उसे प्राप्त करने से हम इनकार करें।

इस मामले में पहली जरूरी चीज यह है कि हम अपना ऐसा दिमागी रुख बना लें जो उन चीजों और सहूलियतों को हासिल न करे, जो लाखों लोगों को नसीब नहीं है, और दूसरी जरूरी बात यह है कि हम अपनी जिन्दगी में जितनी जल्दी हो सके इस नयी कसौटी के मुताबिक रद्दोबदल कर लें ।३

गाँव का काम हमें डरा देता है। हममें से जो लोग शहर में पैदा हुए और पले हैं, उन्हें देहाती जिन्दगी अपनाने में बड़ी मुश्किल मालूम पड़ती है ।४

गाँव की कठिन जिन्दगी अपनाने के मामले में हमारा शरीर ज्यादातर साथ नहीं देता। लेकिन अगर हम जनता के स्वराज्य की इच्छा रखते हैं; एक वर्ग की जगह दूसरे वर्ग के शासन की नहीं, तो हमें अपनी शारीरिक कठिनाई पर हिम्मत और बहादुरी के साथ विजय हासिल करनी होगी।

इसका एक ही रास्ता है और वह यह कि हम सुविधावालों को भूल जायँ और गाँववालों के बीच में बैठकर गहरे विश्वास के साथ सफाई, परिचर्या और सेवा का काम किसी स्वत्वाधिकारी के रूप में नहीं, बल्कि सेवक के रूप में करें ।५

—मो० क० गांधी

---

(१) "मेरे सपनों का भारत", पृष्ठ : २५ (२) "यंग इण्डिया", १७ अप्रैल '२४, पृष्ठ : १३० (३) "यंग इण्डिया", २४ जून '२६, पृष्ठ : २२६ (४) "यंग इण्डिया", १७ अप्रैल '२४, पृष्ठ : १३० (५) "हरिजन", १६ मई '३६, पृष्ठ : ११२।

www.vinoba.in

•"गवर्नमेंट को कैसे समझाया जाय ?"— व्यापारियों की परेशानी
•खादी-कार्यकर्ताओं के खिलाफ बगावत

पिछले दिनों "भूदान-यज्ञ" में हैदराबाद के तेल मिल-मालिक संघ तथा बम्बई में श्री रामकृष्ण बजाज द्वारा परिचालित व्यवहार-शुद्धि कार्यक्रम के सम्बन्ध में जो लेख प्रकाशित हुए थे, उन्हें पढ़कर मुरैना (म० प्र०) के एक व्यापारी भाई लिखते हैं :

"मैं सर्वोदय-प्रेमी हूँ। सात वर्ष से अखिल भारतीय सर्वोदय-सम्मेलनों में दर्शक के तौर पर शरीक होता रहा हूँ। छोटा व्यापारी हूँ। सेल्स टैक्स की चोरियों से परेशान हूँ। मेरे जैसे हजारों व्यापारी परेशान हैं। इस झगड़े से मुक्ति कैसे मिले इसके लिए आप व्यापार मण्डलों में दौरा कर सकें, मार्गदर्शन दे सकें, तो बड़ी हवा बने, तेलों पर सेल्स टैक्स पहाड़ जैसा है। गवर्नमेंट को कैसे समझाया जाय ? एक मिलवाला टैक्स नहीं देता है, चोरी से काम करता है। दूसरा टैक्स देता है तो उसका माल १५ रुपये क्विण्टल ऊँचा हो जाता है। टैक्स-चोर का माल बिक जाता है, टैक्स देनेवाले का पड़ा रहता है। आप बताइए, ऐसी परिस्थिति में क्या किया जाय ?"

पहली बात तो इन्हें और इनके जैसे दूसरे भाइयों को तथा हम सबको यह समझनी है कि इसमें गवर्नमेंट को समझाने की कोई बात नहीं है। गवर्नमेंट यानी गवर्नमेंट का संचालन करनेवाले लोगों से ये सब बातें छिपी नहीं हैं। वे जानते हैं, पर उनका हित इसीमें है कि यह सब चलता रहे। समझना तो यह चीज आपको-हमको है। व्यापार के क्षेत्र में ही नहीं, आज हर क्षेत्र में चोर और बेईमान की बन आ रही है। ईमानदारी और सच्चाई तिरोहित हो रही है। ऐसी व्यापक बीमारी का इलाज क्या बताया जाय; सिवाय इसके कि अब जड़ ही काटने में शक्ति लगानी चाहिए। आज उद्योग, व्यापार, राजनीति आदि में छोटे-बड़े सत्ता-केन्द्र बन गये हैं, और इन सब प्रवृत्तियों का संचालन इन केन्द्रों के "सत्ताधारियों" में सीमित हो गया है। भिन्न-भिन्न क्षेत्रों के इन सत्ताधारियों का आपस का अलिखित और मन-समझ समझौता है, जिसके परिणामस्वरूप जनता के शोषण में सब एक हैं, चाहे अपने आपस में सत्ता के बँटवारे के बारे में विभिन्न पार्टियों या वर्गों के रूप में एक-दूसरे से लड़ते या विरोध करते नजर आते हों। सत्ता के इन केन्द्रों को तोड़ना ही मुख्य काम है। इन केन्द्रों को तोड़कर जनता को ताकत सीधे अपने हाथ में लेनी होगी।

सवाल यह है कि यह हो कैसे ? ऊपर से या राजनीति के जरिये, कभी भले ही यह सम्भव रहा हो, आज तो नहीं है। विरोधी पार्टियों की आज की असहायता और नैराश्य इसका प्रमाण है। तोड़-फोड़ करके ये लोग अव्यवस्था जरूर पैदा कर सकते हैं, लेकिन परिस्थिति को सुधार नहीं सकते। यह दूसरी बात है कि आज की परिस्थिति और परेशानी की अपेक्षा तो अव्यवस्था भी स्वागत-योग्य है। वास्तव में तो परिस्थिति को सुधारना इन पार्टियों का भी लक्ष्य नहीं है। खुले शब्दों में कहें तो हर पार्टी का लक्ष्य यही है कि आज सत्ता का संचालन, अर्थात् शोषण और मनमानी करने का अधिकार, जो अमुक पार्टी के हाथ में है वह उसके बजाय हमारे हाथ में आ जाय। पर उससे समस्या का स्थायी हल नहीं होता। छाती पर से एक पत्थर हटेगा, दूसरा आ बैठेगा। जनता कहाँ तक इन पत्थरों को हटाती रहेगी ? इसलिए एकमात्र उपाय यही है कि पत्थरों को छाती पर टिकने ही न दिया जाय।

× × ×

खादी के क्षेत्र में वर्षों से काम कर रहे एक साथी ने खादी-जगत् की मौजूदा स्थिति से दुखी होकर लिखा है कि "अपने ही लोगों" यानी खादी-संस्थाओं के संचालकों के खिलाफ बगावत करने को जी चाहता है। आज समाज में अन्याय के खिलाफ सिर उठाने की वृत्ति और प्रतिकार की शक्ति इतनी कम होती जा रही है कि कहीं से भी बगावत की आवाज आती है तो वह सुहाती है। पर वस्तुस्थिति के सही आकलन की दृष्टि से मैंने इन भाई को लिखा था कि खादी के काम का सन्दर्भ और वातावरण आज इतना बदल गया है कि खादी या खादी-कार्यकर्ताओं से आज भी हम वही अपेक्षा रखें जो पहले रखते थे तो यह शायद उनके प्रति न्याय नहीं होगा।

इस बात के औचित्य को स्वीकार करते हुए इन भाई ने एक बहुत वाजिब सवाल पूछा है। उन्होंने लिखा है कि अगर हम यह मानते हैं कि खादी की संस्थाओं में अब पहलेवाली दृष्टि नहीं है ; "तो फिर आप जैसे लोगों का वहाँ क्या काम है ? क्यों नहीं आप उनको छोड़कर बाहर आते और उसके खिलाफ बगावत का झण्डा उठाते ?"

यह प्रश्न बहुत संगत (पर्टिनेण्ट) है। मैं खुद अपने-आपसे अकसर यह सवाल करता हूँ, और जो जवाब मुझे अपने चिन्तन से मिलता है वह यह है कि आज चारों ओर समाज के मूल्य इतने गिर गये हैं कि बहुत-सी ऐसी बातों के लिए, जो पहलेवाले मूल्यों की दृष्टि से नहीं होनी चाहिए, खादी-संस्थाएँ या खादी-कार्यकर्ता पूरी तौर से जिम्मेदार नहीं माने जा सकते। वे भी परिस्थितियों के शिकार हैं। जैसा विनोबा अकसर विनोद में कहते हैं, भ्रष्टाचार इतना व्यापक हो गया है कि वह "शिष्टाचार"-सा हो गया है। ऐसी परिस्थिति में हम कहाँ-कहाँ से अलग होंगे, या किस-किसको छोड़कर बाहर आयेंगे ? एक मोह यह भी है कि हम इन संस्थाओं में रहते हैं तो इनका कुछ उपयोग हमारे मूल उद्देश्य की पूर्ति के लिए हो सकता है।

जहाँ तक बगावत का सवाल है, यह स्पष्ट है कि पत्ते या टहनियों को नोचने में शक्ति खर्च करना व्यर्थ है। हमारी शक्ति जड़ को काटने में ही लगनी चाहिए। बगावत करनी अवश्य है, पर वह समग्र करनी है, यानी आज की सम्पूर्ण समाज-व्यवस्था के खिलाफ करनी है। मैं यह भी मानता हूँ कि अब समय आया है जब वह बगावत सिर्फ विधायक, अर्थात् ग्रामदान-ग्रामस्वराज्य के प्रयत्न तक सीमित नहीं रहनी चाहिए, बल्कि आज की अन्यायपूर्ण और दम घोटनेवाली व्यवस्था के प्रति विद्रोह के रूप में भी प्रकट होनी चाहिए। —सिद्धराज ढड्ढा

www.vinoba.in

सम्पादकीय

किस गांधी की जन्म-शताब्दी ?

"राजनैतिक नेताओं ने गांधीजी के क्रान्तिकारी विचारों को पीछे ढकेल दिया है। गांधीजी के जो विचार समाज-परिवर्तन के थे, उन पर से जोर हटकर उनके व्यक्तित्व के उन परम्परागत और धार्मिक पहलुओं पर चला गया है जो समाज के मौजूदा ढाँचे की ओर झुके हुए दिखाई देते हैं।"

ये शब्द उन जर्मन समाजशास्त्रियों के हैं जो हाल में भारत आये थे तथा उत्तर प्रदेश और आन्ध्र प्रदेश के चार जिलों में घूमे--यह जानने के लिए घूमे कि लोगों के दिलों में जो गांधी है, और जो गांधी 'बड़ों' द्वारा प्रस्तुत किया जा रहा है वह कैसा है। इन विद्वानों ने पाया कि बहुत अधिक लोगों को यह मालूम भी नहीं है कि यह गांधी-जन्म-शताब्दी का वर्ष है। उन्होंने यह भी देखा कि नेता अपने जिस विचार का प्रचार करना चाहते हैं उसके साथ गांधी का नाम जोड़ लेते हैं। जनता को गांधी में पूरा विश्वास है; नेताओं में उसका विश्वास उठ चुका है। जीवन के प्रति भी उसकी आशा उठ चुकी है।

हमने सन् १९६९ को गांधी-वर्ष के रूप में मनाने का निर्णय तो कर लिया, लेकिन क्या हमने यह भी सोचा कि किस गांधी का वर्ष मनाना है ? बकरी का दूध पीने और लंगोटी लगानेवाले गांधी का, या उस गांधी का जो कुछ स्वप्न छोड़ गया, कुछ प्रश्न उठा गया, और सामाजिक क्रान्ति की एक सम्पूर्ण योजना बता गया ? गांधी को चिन्ता थी मनुष्य की मुक्ति की—हिंसा से, असत्य से। उसे गरीब को राहत पहुँचाने से कहीं अधिक चिंता थी गरीबी का अंत करने की; शोषण और दमन को हमेशा के लिए खत्म करने की। यह आज के सामाजिक ढाँचे में कैसे संभव होगा ? गांधी पैदा हुआ था, इस ढाँचे को बदलने के लिए, और समाज का ढाँचा तब बदलता है जब सत्ता (पावर) और सम्पत्ति (प्रापर्टी) का स्वरूप बदलता है—स्वामित्व और नेतृत्व बदलता है। क्या यह बुनियादी परिवर्तन होगा कुएँ, सड़क और गांधी-भवन बनवाने से, प्रदर्शनियाँ लगाने से, बैज और चित्र बेचने से, गांधीकी प्रशंसा में लेख लिखने और भाषण देने से ? क्या जिस देश में गांधी नहीं थे उनमें कुएँ नहीं खोदे जाते, सड़कें नहीं बनवायी जातीं ?

गांधी ने कहा था कि सबसे बड़ी हिंसा है राज्य की हिंसा। उससे मुक्त होना वास्तविक क्रान्ति है। राज्य की शक्ति का क्षय और 'लोक' की शक्ति का उदय, उस क्रान्ति के दो अभिन्न पहलू हैं। लेकिन कहाँ दिखाई देती है विद्वानों, नेताओं और सेवकों में वह तीव्रता और तत्परता जो १९६९ में देश के जन-जीवन में ऐसी लहर पैदा कर दे कि लोक-शक्ति का उदय और राज्य-शक्ति का क्षय होता स्पष्ट दिखाई दे ? शायद उस गांधी के लिए अभी हमारे 'बड़े' तैयार नहीं हैं।

जो कुछ गांधी ने किया उसके लिए प्रशंसा के पाठ पढ़ना निरर्थक है। गांधी का स्थायी मूल्य उन स्वप्नों में है जिन्हें वह पूरा नहीं कर सके। उनके स्वप्न हमारे लिए आज जीवन-मरण के प्रश्न बन गये हैं। आज भी उन प्रश्नों का सही और साध्य उत्तर गांधी के सिवाय दूसरे किसीके पास नहीं है। लेकिन अगर गांधी के स्वप्नों और उत्तरों में हमें रुचि नहीं है तो गांधी के नाम में समारोह रचकर हम जनता के सामने अपने मन का गांधी क्यों पेश करें ? कम-से-कम हम इतना तो करें कि जनता और उसके गांधी के बीच में हम न खड़े हों। इस देश की जनता अपने गांधी को खूब समझती है, और अब गांधी का नाम लेनेवालों को भी समझने लगी है।

दुनिया भारत में १९६९ के गांधी को देखना चाहती है। वह गांधी कौन है ?

टिकट ! टिकट !

हमारी रेलों के सामने एक बड़ा सवाल यह है कि सफर करनेवाले टिकट लें, और कोई 'डब्ल्यू टी' सफर न करे। दूसरी ओर हमारी राजनैतिक पार्टियों के सामने यह समस्या है कि जितने लोग टिकट चाहनेवाले हैं उतने टिकट उनके पास नहीं हैं। राजनीति की यह खूबी है कि उसमें ज्यादा-से-ज्यादा लोग 'विथ टिकट' चलना चाहते हैं। उसमें 'विदाउट टिकट' चलनेवालों की संख्या बहुत कम होती है।

इस वक्त लखनऊ या पटना में जाइए, तो चुनाव की एक अजीब चहल-पहल दिखाई देगी। रिक्शेवाले, तांगेवाले, होटलवाले, सिनेमावाले, सब खुश मिलेंगे। टिकट चाहनेवाले, टिकट दिलानेवाले, कुछ लोगों को टिकट मिलने से रोकनेवाले, टिकट देनेवाले, कुल मिलाकर टिकट के इर्दगिर्द अच्छी-खासी जमात बन जाती है। कभी पार्टी के दफ्तर से निकलकर चाय की दूकान पर बैठ गये तो दूध, चीनी, सब खत्म हो गयी। होटल में घुस गये तो दाल साफ कर दी। उस दिन लखनऊ में एक चायवाला कहने लगा : 'बाबूजी, क्या यह चुनाव हर साल नहीं हो सकता ?' पूछा : 'क्यों ?' बोला : 'और कुछ तो क्या होगा, कम-से-कम चार पैसे तो मिल जाते हैं।'

रेल का टिकट तो पैसे से मिलता है, लेकिन पार्टी का टिकट कैसे मिलता है ? जैसे रेल में पैसे की जरूरत होती है, उसी तरह पार्टी में भी बिना पैसे के काम नहीं चलता। पैसा अपना हो, मित्रों से मिले, पार्टी दे; कहीं से आये; लेकिन पैसा जरूर होना चाहिए। चुनाव में पैसे की ताकत से बहुत काम बनता है। पैसा सिद्ध कर सकता है कि वोट माँगनेवाले में गुण ही गुण हैं। उम्मीदवार की अच्छाइयाँ दिल और दिमाग से ज्यादा उसके पैसे में, उसके प्रचार में, उसके गुट में और उसकी जाति में होती हैं। दल का जादू अब बहुत कम हो गया है। दल लोगों के दिल से निकलता जा रहा है।

ऐसा क्यों होता है कि टिकट पार्टी से, और वोट जनता से लिया जाता है ? जिसका वोट हो उसीका टिकट भी क्यों न हो ? क्या ऐसा नहीं हो सकता कि जिस जनता से वोट माँगा जाय उसीसे टिकट भी लिया जाय ? पार्टियों को टिकट देने का क्या विशेष अधिकार है ? उनके टिकट में क्या शक्ति है, किसका प्रतिनिधित्व है ?

www.vinoba.in

समाजवाद का पुराना नारा है : "जमीन किसकी ? जो जोते-बोये उसकी !" क्या इसी तरह यह नारा नहीं हो सकता कि उम्मीदवार किसका ? जो वोट दे उसका। सचमुच उम्मीदवार वोटरों का ही होना चाहिए, न कि दल का। 'लोक' और उसके 'तंत्र' के बीच में दलों की पंडागिरी की जरूरत क्यों होनी चाहिए ? था एक समय जब दलों द्वारा जनता की आवाज बुलंद हुई थी, उसे अधिकार मिले थे, लेकिन अब जनता बालिग हो गयी है। उसे दलों के नेतृत्व या संरक्षण की जरूरत नहीं रह गयी है। लेकिन दलवाले हमारे समाजवादी अब भी यही मानते जा रहे हैं कि अगर स्वामित्व एक वर्ग के हाथ से निकलकर दूसरे वर्ग के हाथ में चला जाय, और वह वर्ग अपने नये स्वामित्व को कायम रखने के लिए सरकार को अपने हाथ में कर ले तो समाजवाद कायम हो जायेगा। इस भ्रम में वह नारा लगाते हैं समाजवाद का और बनाते हैं दल। जिस समाज में वे काम करते हैं वह समाज तो समाजवाद चाहता नहीं, चाहता है एक समुदाय। जब वह समुदाय अपनी पार्टी बना लेता है, तो दूसरे समुदाय भी अपनी-अपनी पार्टियां बना लेते हैं। इसका परिणाम यह होता है कि स्वामित्व का सवाल झगड़े की जड़ बन जाता है, और समाज दलों के दलदल में फँसकर रह जाता है। सचमुच समाजवाद तो कायम नहीं हो पाता, अलबत्ता सरकार की तानाशाही कायम हो जाती है।

इसके विपरीत ग्रामदान में गाँव के लोग अपने-आप अपने-अपने स्वामित्व को अपनी ग्रामसभा को दे रहे हैं। इस तरह स्वामित्व का झगड़ा ही नहीं रह जाता। और, जब स्वामित्व का झगड़ा नहीं रहता, तो समाजवाद के लिए दल बनाने की जरूरत क्यों रहनी चाहिए ? ग्रामदान में गाँव खुद नये स्वामित्व की इकाई बन जाता है, साथ ही नये नेतृत्व की भी इकाई बन जाता है। जब जनता ने खुद इतना कर लिया तो समाजवाद और लोकतंत्र से दल की समाप्ति हो जानी चाहिए। गाँव को किसीके टिकट की जरूरत नहीं है। एक निर्वाचन-क्षेत्र के संगठित गाँव स्वयं तय कर सकते हैं कि ऊपर की सरकार में उनकी आवाज पहुँचाने के लिए उनकी ओर से कौन आदमी जायेगा।

आज जितने लोगों को पार्टियों के टिकट मिल रहे हैं क्या वे समझते हैं कि जनता की नजर में वे 'विदाउट टिकट' हैं ? इसलिए उन्हें मिलनेवाला वोट जनता के विश्वास का नहीं, उसके अविश्वास का प्रतीक और प्रमाण माना जायेगा। पार्टियों के टिकट से चलनेवाले चुनाव का ही यह नतीजा है कि हमारे लोकतंत्र में बहुमत का सिद्धान्त भी नहीं रह गया है, और बराबर ऐसी सरकारें बनती जा रही हैं जो 'मेजारिटी वोट' की सरकारें नहीं कही जा सकतीं। जब इतनी बात भी नहीं रह गयी है तो टिकट का लोकतंत्र से कोई अनिवार्य सम्बन्ध है, यह मानना कठिन है। इसलिए इस मध्यावधि चुनाव में हमें 'विथ या विदाउट टिकट' का ध्यान छोड़कर अच्छे उम्मीदवार को ही वोट देना चाहिए। तब हमारा वोट बावजूद दल के टिकट के लोकतंत्र और समाजवाद को दलमुक्त करने की दिशा में पहला ठोस कदम होगा। हमें अब खुलकर कहना चाहिए कि भले ही दल बने हुए हैं, लेकिन हम नहीं मानते कि वे हैं। •

भारत में ग्रामदान-प्रखंडदान-जिलादान

प्रांत	ग्रामदान	प्रखण्डदान	जिलादान
१. बिहार	३२,९८८	२९६	६
२. उत्तर प्रदेश	१०,१३६	५७	२
३. उड़ीसा	८,५०६	३६	–
४. तमिलनाड	५,३०२	५०	१
५. आंध्र प्रदेश	४,२००	१०	–
६. मध्यप्रदेश	४,१५२	१८	१
७. संयुक्त पंजाब	३,६९४	७	–
८. महाराष्ट्र	३,१२६	१२	–
९. आसाम	१,४८९	१	–
१०. राजस्थान	१,०२१	–	–
११. गुजरात	८०३	३	–
१२. बंगाल	६४४	–	–
१३. केरल	४१८	–	–
१४. कर्नाटक	४१०	–	–
१५. दिल्ली	७४	–	–
१६. हिमाचल प्रदेश	१७	–	–
१७. जम्मू-कश्मीर	१	–	–
कुल :	७६,९८१	४९०	१०

भारत के जिलादान में प्रखण्डदान-ग्रामदान

जिलादान	प्रखण्डदान	ग्रामदान	जिलादान की तारीख
१. दरभंगा	४४	३,७२०	१८ फरवरी १९६७
२. तिरुनेलवेली	३१	२,८९६	२५ दिसम्बर १९६७
३. पूर्णियाँ	३८	८,१५७	१८ अप्रैल, १९६८
४. उत्तरकाशी	४	५६६	२५ मई, १९६८
५. बलिया	१८	१,४६६	३ जून, १९६८
६. चम्पारण	३६	२,८९०	५ सितम्बर, १९६८
७. मुजफ्फरपुर	४०	३,९१७	११ सितम्बर, १९६८
८. सहरसा	२३	२,३९०	११ सितम्बर, १९६८
९. सारण	४०	३,७७१	३० सितम्बर, १९६८
१०. टीकमगढ़	६	७७०	६ नवम्बर, १९६८

भारत में जिलादान : १०; प्रखंडदान : ४९०; ग्रामदान : ७६,९८१

बिहार में ,, ६ ,, २९६ ,, ३२,९८८
उत्तर प्रदेश में ,, २ ,, ५७ ,, १०,१३६
तमिलनाड में ,, १ ,, ५० ,, ५,३०२
मध्यप्रदेश में ,, १ ,, १८ ,, ४,१५२

विनोबा-निवास, डालटेनगंज,
२८ नवम्बर, '६८

— कृष्णराज मेहता

www.vinoba.in

मुक्ति के मार्ग में पाप से अधिक पुण्य बाधक

प्रश्न : बार-बार प्रयास के पश्चात् भी हमारा आन्दोलन जन-आन्दोलन नहीं बन पा रहा है। केवल कुछ ही संस्थाएँ इसमें सक्रिय हैं। जन-आन्दोलन कैसे बने ?

विनोबा : यह प्रश्न कई दफा पूछा गया है। जब जन-आन्दोलन बनेगा, तो हमारा काम लगभग पूरा हो जायेगा। हमको उसके आगे लोगों में शामिल होना, इतना ही करना होगा, बाकी कुछ विशेष रहेगा नहीं। इसलिए जन-आन्दोलन बने, यह इच्छा तो अच्छी है। लेकिन समझना चाहिए कि हमारे परम पुरुषार्थ के बाद वह होगा। उसके लिए हमको बहुत प्रयास करना होगा। उसके अन्त में वह होगा; लेकिन वह कैसे बने, यह सवाल पूछ सकते हैं।

कुछ लोग होते हैं जन, कुछ होते हैं दुर्जन, कुछ होते हैं सज्जन, और कुछ होते हैं महाजन। सज्जन और दुर्जन, इन दोनों का है झगड़ा। दोनों में विरोध है। प्रथम तो हमारी जो जमात है वह कम-से-कम सज्जनों की जमात ही होनी चाहिए, जिससे कि दुर्जनों का विरोध स्वयमेव क्षीण हो जाय। उनको दुर्जन नाम दिया है वह केवल भिन्न-भिन्न वर्ग बताने के लिए। वास्तव में "सुमति कुमति सबके उर बसहिं" सबके हृदय में कुमति सुमति होती है, इसलिए खास कोई दुर्जन और खास कोई सज्जन नहीं होता। ऐसा केवल वर्गीकरण के लिए बोलना पड़ता है। तो कुछ प्रेरणा लोगों को ऊपर खींचती है और कुछ प्रेरणा नीचे खींचती है। ऐसी दोनों प्रकार की प्रेरणाएँ लोगों में होती हैं। तो पहली बात, हमको यह करना होगा कि हमारी जमात अच्छी प्रेरणा से ऊपर खींची जाय, यह पहला कदम होगा और एक मुकाम हासिल कर लिया ऐसा होगा।

दूसरी बात, महाजनों का सहयोग हमको मिले। महाजन कौन हैं ? जिनके हाथ में किसी प्रकार की शक्ति है वे महाजन हैं। शिक्षक हैं, प्रोफेसर हैं, वे महाजन हैं; क्योंकि उनके हाथ में विद्यार्थी-वर्ग है और कुछ करने की शक्ति भी है। सरकारी सेवक हैं, वे भी महाजन हैं; क्योंकि उनके हाथ में भी कुछ करने की शक्ति है। ऐसे ही अन्य लोग भी दीखेंगे—ग्राम-पंचायत के मुखिया होते हैं, ये सारे महाजन हैं। आपने अभी कहा कि कुछ संस्थाएँ इसमें सक्रिय हैं और बाकी सारी सक्रिय नहीं हैं। तो ये संस्थाएँ भी महाजन हैं, क्योंकि उनके हाथों में भी कुछ शक्ति है करने की। तो ऐसे महाजनों का सहयोग प्राप्त करना होगा। उसके बाद जन-साधारण का सहयोग प्राप्त करने की बात आयेगी। प्रथम विरोध-शमन, उसके बाद सहयोग-प्राप्ति और आखिर में जनता उसे उठा ले, ऐसे कदम होंगे।

हम समझते हैं कि पहला भाग हमारा लगभग हो चुका है। कम-से-कम बिहार में तो इसका भास होता है। वहाँ इसके खिलाफ कोई विरोध नहीं है। चन्द लोग होते हैं जो विरोध करते हैं। गाँव में एकाध मनुष्य विरोध करनेवाला मिल भी जायेगा, लेकिन सामान्य हालत विरोध की नहीं। जहाँ तक बिहार का ताल्लुक है, कह सकते हैं कि एक कदम उठाया गया है। यानी विरोध-शमन हो चुका है। जहाँ तक सहयोग-प्राप्ति की बात है, बिहार में बहुत-सा काम हुआ है। चन्द लोग हैं ऐसे पंचायत के मुखिया वगैरह, उनको समझाना होगा; लेकिन उनमें भी बहुत-से लोग अनुकूल हो गये हैं और राजनैतिक पक्षों के लोग भी अनुकूल हो गये हैं। यह प्रक्रिया वहाँ पूरी नहीं हुई है, लेकिन जारी है। ये दो प्रक्रियाएँ जब पूरी होंगी तब सारे समाज को छू लेंगे—सारे ग्राम-समाज को छू लेना, उसके बिना हवा बनती नहीं।

धीरेन् भाई ने कहा कि गांधीजी के जमाने में जो आन्दोलन चला उसका 'इम्पैक्ट' शहरों पर था। सारे काम शहरों में हुए। कलकत्ता, बम्बई, दिल्ली, बंगलोर, लखनऊ आदि शहरों का दौरा हुआ, याने नेता का भारत का दौरा हुआ, समाप्तम्। और उसके बाद अखबारों में आता था कि 'इम्पैक्ट' हुआ है। लेकिन अन्दर की बात जिनको मालूम है वे जानते हैं कि गाँव में यह बात मालूम तक नहीं थी और गाँव के लोगों को सत्याग्रह के लिए पकड़-पकड़कर ले आते थे। वह आन्दोलन लेने का था, देने का नहीं। स्वराज्य-प्राप्ति का आन्दोलन था और जेल में जो राजनैतिक नेता रहते थे उनसे जेलर आदि डर-डरकर रहते थे। हमारी जेलर के साथ हमेशा दोस्ती होती थी, क्योंकि हम उनके काम में सहयोग करते थे। तो हम उनसे पूछते थे कि आप उन लोगों से डरते क्यों हैं ? तब वे जवाब देते थे कि आज नहीं, कल उनके हाथ में बागडोर जानेवाली है। उनके साथ झगड़ा करेंगे तो मामला मुश्किल होगा। उसका मतलब यह था कि उस जमाने में जिन लोगों ने त्याग किया उनको यकीन था कि आगे हमारे हाथ में राज आयेगा। अब इस आन्दोलन में सबको देना है तो हमेशा देने के आन्दोलन में उतना उत्साह नहीं रहता, जितना लेने के आन्दोलन में रहता है। अब गाँव-गाँव को मजबूत बनाना है। यह बात ध्यान में आयेगी तो देने के आन्दोलन में भी उत्साह आयेगा। तो धीरेन् भाई कहते थे कि इस आन्दोलन में हर गाँव में जाना पड़ता है, हर घर में जाना पड़ता है और हस्ताक्षर लेने के लिए घर में लोग न मिलें तो खेत पर भी जाना पड़ता है। इतनी मेहनत करनी पड़ती है, जितनी स्वराज्य के आन्दोलन में नहीं करनी पड़ती थी। उसमें करना भी क्या था ? मुट्ठी भर अंग्रेज थे उनसे भारत छोड़कर जाने को कहना था। और हमारे ही लोग थे जो उनका राज चलाते थे। तो एक सामूहिक इच्छा-शक्ति जागृत हो गयी, सारे लोगों ने इकट्ठा होकर अंग्रेजों से कहा कि भारत छोड़कर जाओ। तो वे समझ गये और छोड़कर चले भी गये। आज तो हर गाँव में हर मनुष्य के पास जाना पड़ेगा, उनको समझाना पड़ेगा। हर व्यक्ति का हस्ताक्षर प्राप्त करना होगा। व्यापक प्रमाण में वह सारा करना पड़ेगा।

vinoba.in

यह जन-संपर्क का आन्दोलन है। गाँव-गाँव में संपर्क बनाते जायँ। हर कोई दान दे। इसीलिए मैंने कहा था कि आपका पर्चा हर गाँव में पहुँचे। यह मैंने क्यों कहा ? आप लोग गाँव-गाँव में ज्यादा-से-ज्यादा दो-चार दफा जा सकेंगे, तो गाँववालों को आगे क्या करना होगा इसका मार्गदर्शन, जगह-जगह क्या चल रहा है इसकी जानकारी कैसे प्राप्त होगी ? तो आपके इस पर्चे के द्वारा वह काम होगा और जन-सम्पर्क सधेगा। यह होगा तब जन-आन्दोलन बनेगा।

प्रश्न : प्राचीन काल से आज तक भारत में वर्षा का संतुलन बिगड़ गया है। इसका क्या कारण है ? कहीं बाढ़ और कहीं अकाल पड़ रहे हैं। इसका कारण आध्यात्मिक और वैज्ञानिक, दोनों दृष्टियों से बतलाने की कृपा कीजिए।

विनोबा : इसका कारण अगर बाबा बतला सकता तो बाबा को ईश्वर का पता चला, ऐसा मानना पड़ेगा। क्योंकि कारण ईश्वर के हाथ में है। जहाँ तक वैज्ञानिक कारणों का सवाल है, विज्ञान इतना ही कहता है कि फलाने समय, फलाने भाग में बारिश होने की सम्भावना है। आज विज्ञान इतना आगे नहीं बढ़ा है, उसका इतना विकास नहीं हुआ है कि वह उसके कारण बताये कि बारिश क्यों नहीं हुई और बाढ़ क्यों आयी। उतना विकास दस-पाँच साल में हो सकता है, लेकिन अभी तक ठीक नियम मालूम नहीं हुए हैं। और मुख्य कारण यह है कि यह सारा ईश्वर के हाथ में है।

आध्यात्मिक दृष्टि से सोचना हो तो, उससे हमको अगर तकलीफ न होती हो बारिश होने से या न होने से, तो उसके साथ हमारा कारण ढूँढ़ने का कोई कारण नहीं। वह परमात्मा तय करता है। लेकिन जब हम उससे तकलीफ पाते हैं तब समझना चाहिए कि हमारे किसी पापों के बिना भगवान हमको तकलीफ नहीं देगा। अगर बाढ़ आने से, अकाल पड़ने से तकलीफ नहीं होती तो हम वही हैं और स्रष्टा काम कर रहा है, ऐसा माने; लेकिन हमको तकलीफ होती है, यह अगर हमको अनुभव आया तो ढूँढ़ना चाहिए कि हमारे हाथ से क्या पाप हो रहा है। आज जो अकाल या बाढ़ दीख रहे हैं, उसका कारण मुझे दीखता है कि हमारे हाथ से पाप हो रहा है, कि हमने जमीन का गलत बँटवारा किया है। इसलिए भगवान पानी का भी गलत बँटवारा करता है। अगर हम जमीन का बँटवारा ठीक से करेंगे तो भगवान इस तरह नहीं करेगा। यह हो सकता है कि कुल मिलाकर कम बारिश हो या ज्यादा हो, लेकिन इतना विषम बँटवारा नहीं करेगा। आज वह हो रहा है। उसका कारण यह है कि आज संपत्ति का विषम वितरण है और उस पाप के कारण वर्षा में संतुलन नहीं रहा है, ऐसा हमको लगता है। हम संपत्ति का, जमीन का सुन्दर वितरण करें, तो भगवान बारिश ठीक भेजता रहेगा।

प्रश्न : वर्षा का पुनः संतुलन ज्यों-का-त्यों कायम हो, इसके लिए भारत में क्या उपाय करने चाहिए ?

विनोबा : इसमें इन्होंने यह माना हुआ दीखता है कि वर्षा का संतुलन पुराने जमाने में था, आज नहीं। लेकिन यह ठीक नहीं। पुराने जमाने में भी बार-बार अकाल आता था। लेकिन लोगों को मालूम नहीं होता था। मान लीजिए असम में बाढ़ आयी, बहुत-से लोग मरे, लेकिन मारवाड़ में मालूम नहीं होता था कि बाढ़ आयी। आज छोटी-सी बात भी सब जगह मालूम होती है। पुराने जमाने में भी मनुष्य के जीवन में, आचरण में विषमता थी, तो उस कारण से भगवान भी उन्हें विषम वर्षा देता होगा। तो वर्षा का संतुलन ठीक नहीं है, इसका कारण यही है कि मनुष्य जो पाप करता है इस कारण ईश्वर उसको सजा देता है।

प्रश्न : सभी रचनात्मक क्षेत्र में लगे साथी सर्वोदय-क्रान्ति में तत्परता नहीं दिखा रहे हैं। उसके लिए क्या करना चाहिए ?

विनोबा : इसका कारण है। ये लोग अच्छा काम करते हैं और हमेशा मुक्ति के मार्ग में पाप जितना बाधक होता है उससे पुण्य अधिक बाधक होता है। पुण्य करनेवाला कहता है कि मैं तो पुण्य कर रहा हूँ। इसलिए यह काम छोड़ने का कोई सवाल ही नहीं, और जो पाप कर रहा है, वह सोचता है कि मैं तो पाप कर रहा हूँ इसलिए इस पाप से छुटकारा पाना चाहिए। क्योंकि रचनात्मक कार्यकर्ता अच्छा कार्य कर रहे हैं, वह पुण्य कार्य है। इसलिए वह मुक्ति के मार्ग में बाधक होता है नम्बर एक, और नम्बर दो, रचनात्मक कार्यकर्ताओं में से बहुत-से लोग अपने काम में फँसे रहते हैं। उनमें से जितने आ जायेंगे, उतने की मदद लेनी चाहिए और जो नहीं आयेंगे उनकी निन्दा नहीं करनी चाहिए। क्योंकि पुण्य की निन्दा करने से पाप फैलता है। इसलिए जो आयें उनसे मदद लें, और जो नहीं आयें उनकी निन्दा न करें और ईश्वर के पास प्रार्थना करें कि वह उन्हें आने की बुद्धि दे।

प्रश्न : अकाल और बाढ़, जो कि भारत में किसी-न-किसी क्षेत्र में पड़ रहे हैं, हमारे क्रान्ति-कार्य में बाधक हैं या साधक ?

विनोबा : प्रश्न पूछा है कि अकाल, बाढ़ आदि संकट हमारे काम के लिए अनुकूल हैं या प्रतिकूल ? स्पष्ट है कि दुःख बाँटने से कम होता है और सुख बाँटने से बढ़ता है। इसलिए समझ लीजिए कि यह सारा आपके लिए तो अनुकूल है ही। अकसर हम समझते हैं कि जो दुखी है उसके लिए तकलीफ है, लेकिन सुख को भी तकलीफ होती है और वह बाँटना चाहिए। यह समझाकर सुख-दुःख, दोनों का लाभ उठाकर आप आगे बढ़िए।

कार्यकर्ताओं से हुई चर्चा से, बलरामपुर (म० प्र०) : २०-११-'६८

श्रमिक-आन्दोलन : गतिरोध के बाद ?

[सर्वोदय-आन्दोलन व्यावहारिक तौर पर गाँवों में ही सक्रिय है। नगर में—खासकर नगरीय उद्योगों के क्षेत्र में अभी तक कुछ हो नहीं सका है। सर्वोदय-नगर के उद्घोष के साथ यद-कदा कुछ छिटपुट कार्यक्रम चलाये गये हैं, लेकिन समग्र और सम्पूर्ण परिवर्तन का कोई नगरीय कार्यक्रम अभी तक नहीं बन पाया है। आबू रोड के सर्वोदय सम्मेलन में श्री जयप्रकाश नारायण ने इस दिशा में सोचने के लिए प्रेरित किया था। प्रस्तुत लेख उसी दिशा में सबके सहचिंतन के लिए प्रस्तावना के रूप में प्रस्तुत है।—सं०]

सन् '६० में विनोबाजी ने इन्दौर में सर्वोदय-नगर की परिकल्पना को साकार करने का आवाहन किया था। सर्वोदय-नगर की कल्पना एक विशाल और ऊँची कल्पना है, जिसका विस्तार बिन्दु से सिन्धु तक हो सकता है। मुख्य प्रश्न है इसे साकार करने का। इसे कौन साकार करे और कैसे करे? हमारे समाज का यक्ष प्रश्न है कि स्वतंत्र जनशक्ति कैसे जगे? बिना स्वतंत्र जनशक्ति के न गंदगी का मसला हल हो सकता है, न बेकारी का और न अज्ञान का। स्वतंत्रता-प्राप्ति के लिए जिस शक्ति की प्राणप्रतिष्ठा देश में हुई थी, वह आजादी के बाद कुंठित हुई है। देश की जनता अधिकाधिक सरकार-मुखापेक्षी बनी है और एक-दूसरे के विरोध ने वातावरण में निराशा और हताशा को भर दिया है। विनोबाजी ने इस वातावरण को बदलने के लिए, देश में आशा और उत्साह का ताजा वायु-मण्डल बनाने के लिए ही एक "समग्र अहिंसक क्रांति" का बिगुल बजाया है।

यह स्पष्ट है कि भारत में क्रांति का केन्द्र गाँव होंगे। इसीलिए विनोबाजी ने भूमिहीन मजदूर को शीर्षस्थान में रखकर ग्रामदान की तेज प्रक्रिया से शोषण-मुक्ति का महाभियान चलाया है, जो अब अपने दायरे में समूचे बिहार राज्य को तेजी से समेट रहा है। लेकिन अब समय आ गया है कि "शहरी श्रमिक" को केन्द्र में रखकर ग्रामदान-मूलक क्रांति का दूसरा छोर भी पकड़ा जाय। इन्दौर में विनोबाजी ने इस तरफ इशारा तो अवश्य किया था तथा भिलाई, राउरकेला आदि में स्पष्ट शब्दों में कहा भी कि ग्रामीण भूमिहीन मजदूर और शहरी श्रमिक, दोनों को अपनी मुक्ति के लिए साथ मिलकर प्रयत्न करना है, एक-दूसरे को मदद पहुँचानी है। एक बार तो एक प्रदेश के प्रमुख श्रमिक नेता से बात करते हुए उन्होंने यहाँ तक कहा कि "यदि शहरी श्रमिक क्षेत्रवाले कार्यकर्ता चाहें तो मैं उनकी मदद कर सकता हूँ और शहरों में भी सर्वोदय-दृष्टि से श्रमिकों में अच्छा काम किया जा सकता है।" जब मैंने इसी अवसर पर विनोबाजी से पूछा कि आप अपनी ओर से ही इस काम को प्राथमिकता देकर शुरू क्यों नहीं करते? तो उन्होंने कहा था कि "मैं एक प्रकार से ग्रामदान द्वारा शहरी श्रमिकों की मदद ही कर रहा हूँ। ग्रामदान होगा, तो गाँव में भूमिहीनों को जमीन मिलेगी और लोग शहरों में नहीं आयेंगे, और शहरी श्रमिकों की तादाद में अनावश्यक वृद्धि नहीं होगी। उनकी माँगों के लिए वे ज्यादा विश्वास के साथ काम कर सकेंगे। गंदी बस्तियाँ नहीं बढ़ेंगी। गाँव में मजदूर-मालिक में सद्भाव पैदा होगा, तो उसका असर शहर में भी मालिक-मजदूर-सम्बन्धों पर अच्छा ही पड़ेगा। गाँव का उत्पादन बढ़ेगा, तो उद्योग भी ठीक से चलेंगे, बेकारी नहीं होने पायेगी और शहरी श्रमिकों का जीवन भी सुखी बन सकेगा।" सन् '६५ में यह चर्चा हुई थी। तब से अब तक देश की परिस्थिति बहुत बदल चुकी है।

अभी हाल में ही १६ सितम्बर को आयोजित केन्द्रीय कर्मचारियों की सांकेतिक हड़ताल ने समाचार-पत्रों के कर्मचारियों की लम्बी चलनेवाली हड़ताल ने, तथा इसके पूर्व 'घेराव' की हजारों घटनाओं, नक्सालबाड़ी के आन्दोलन, तथा इन जैसी अनेक घटनाओं ने छोटे-बड़े पैमाने पर सरकार, श्रमिक-नेताओं, व्यवसायियों तथा उद्योगपतियों, स्वयं श्रमिकों और किसानों के सामने कुछ तथ्य स्पष्ट कर दिये हैं। वैसे तो सारे विश्व में ही श्रमिक-आन्दोलन एक ऐसे मुकाम पर पहुँच गया है कि अब उसको अपनी दिशा बदलने की आवश्यकता महसूस हो रही है। साम्यवादी क्षेत्रों में श्रमिक मैनेजरों और सरकारों के हाथ की कठपुतली बना है और श्रमिक-संगठन सरकारी तंत्र का अंग बने हैं। अन्य पश्चिमी देशों में श्रमिक-आन्दोलन सुधारवाद के जाल में फँसकर सुविधाएँ प्राप्त कराने का एक कार्यक्रम मात्र बनकर रह गया है। समाज-रचना में बुनियादी परिवर्तन, श्रमनिष्ठा, प्रेम और समता आदि नारे भर रह गये हैं। हमारे देश में तो सर्वाधिक दिशाभ्रम, विघटन, अशान्ति, अक्षमता, भ्रष्टाचार, गिरावट और परस्पर अविश्वास के वातावरण का क्षेत्र ही शहरी श्रमिक-क्षेत्र बन गये हैं। इससे देश की उत्पादकता घटी है और औद्योगीकरण की गति बढ़ने के स्थान पर कुण्ठित ही हुई है। जो भी तथ्य अपने सामने हैं, उनसे निश्चयपूर्वक यह कहा जा सकता है कि इस परिस्थिति के कुछ कारण हैं। जैसे—

- श्रमिक-संगठनों में सत्ता, पक्ष और गुट की राजनीति का प्रवेश होने से सारे संगठन छिन्न-भिन्न हो गये हैं।
- एक ही उद्योग में विभिन्न राजनीतिक दलों के अलग-अलग श्रमिक-संगठन बन गये हैं, जो एक-दूसरे के खिलाफ और अन्ततोगत्वा स्वयं श्रमिकों के खिलाफ ही काम कर बैठते हैं।
- शासन द्वारा मान्यताप्राप्त संगठनों को अतिरिक्त सुविधाएँ मिलने से लोकतांत्रिक प्रक्रिया ही समाप्तप्राय हो गयी है।
- श्रमिक इतने दीन और परेशान हैं कि लगभग सभी संगठनों का शुल्क जमा करते हैं और अतिरिक्त व्यय-भार वहन करते हैं। इतने पर भी उन्हें विश्वास नहीं है कि उनके हित सुरक्षित हैं।
- श्रमिक-नेताओं में न श्रमिकों का भरोसा रहा है और न उद्योगपतियों का। समझौता करने और किये गये समझौतों को निभाने की शक्ति प्रायः सभी श्रमिक-संगठन खो चुके हैं।

www.vinoba.in

- उद्योगपति कभी लालच देकर श्रमिकों से और श्रमिक-नेताओं से काम निकालते हैं, कभी खुशामद करके अतिरिक्त सुविधाएँ देकर। नीतिविहीन व्यवहार बढ़ता जा रहा है। इससे एक ओर श्रमिकों का अहित हो रहा है, उनका राजनीतिक और आर्थिक शोषण हो रहा है, तो दूसरी ओर उद्योगपति दुःखी, भयत्रस्त और परेशान हो गये हैं। स्थिति यहाँ तक पहुँच रही है कि कोई भी पैसेवाला अपना पैसा उद्योगों में नहीं लगाना चाहता।

ऐसी विकट परिस्थिति का दबाव लोकतंत्र पर पड़ रहा है। और यही कारण है कि आम जनता में यह भावना दृढ़ होती जा रही है कि आज का लोकतंत्र इन चुनौतियों का जवाब नहीं दे सकता है। इसीलिए एक या दूसरे प्रकार की तानाशाही की माँग दबे-छिपे अनेक कोनों से आती रहती है। क्योंकि आज की सरकार में और आज की राजनीति में यह शक्ति नहीं रही है कि इस परिस्थिति को बदल सकें।

इस परिस्थिति को बदलने के लिए बिलकुल नये सिरे से और नये तरीके से प्रयत्न करने की आवश्यकता है। सर्वोदय-आन्दोलन की पृष्ठभूमि में शहरी श्रमिकों में कार्य करने की दिशा निम्नानुसार हो सकती है :

उद्योग-सभा : एक सुझाव

- प्रत्येक उद्योग में श्रमिक, उद्योगपति, व्यापारी, उत्पादक और उपभोक्ता के हितों को ध्यान में रखकर इस एक 'उद्योग-सभा' का संगठन किया जाय। इस सभा का स्वरूप एक संस्था का भी हो सकता है। किसी बड़े उद्योग में विभागों के आधार पर भी ऐसी छोटी-छोटी सभाओं का गठन हो सकता है। इस सभा में उद्योग से सम्बन्धित विभिन्न समस्याओं पर आपस में विचार-विमर्श किया जाय तथा सभी निर्णय सर्वानुमति से किये जायें। सभी लोग यदि एक-साथ बैठकर विचार करेंगे तो आपसी सद्भाव भी बढ़ेगा और एक-दूसरे की कठिनाइयों को समझने का अवसर मिलेगा। इस सभा की सबसे बड़ी विशेषता और बल इस मान्यता में होगा कि मजदूर, महाजन, व्यापारी, उद्योगपति तथा उपभोक्ता, सबका हित एक-दूसरे के हित में है। इनमें आपस में हित-विरोध नहीं है।
- उद्योगों की मालकियत केवल कुछ 'मालिकों' तक सीमित नहीं रहनी चाहिए। 'उद्योग-सभा' ही उद्योग की मालिक है। इस भावना को दृढ़ करने के लिए एक घोषणापत्र विकसित करके उद्योग के श्रमिक, कर्मचारी, मैनेजर तथा उद्योग-प्रवृत्ति से सम्बन्धित सभी हिस्सेदार आदि यह संकल्प करें कि वे अपने उद्योग में विश्वस्त (ट्रस्टी) की हैसियत से रहेंगे। इसमें व्यक्तिगत अभिक्रम और स्वातंत्र्य कायम रहे इसलिए वर्तमान मैनेजर, प्रबन्धक आदि की आज जो हैसियत है, उनका बना रहना आवश्यक है।
- उद्योग-सभा के सदस्य किसी श्रमिक-संगठन के सदस्य नहीं रहेंगे।
- यह 'उद्योग-सभा' दलगत और सत्ता की राजनीति में भाग नहीं लेगी। चुनाव में अपने उम्मीदवार खड़ी नहीं करेगी और न किसी उम्मीदवार का समर्थन या विरोध करेगी।
- यह 'उद्योग-सभा' किसी भी प्रकार के राजनैतिक चन्दे नहीं देगी।
- उद्योग-सभा सामान्यतः नवीन वैज्ञानिक साधनों, यन्त्र आदि को उद्योगों के लिए अवश्य स्वीकार करेगी, लेकिन यह ध्यान रखा जायगा कि इससे बेकारी न बढ़े और यदि बेकारी हो तो अतिरिक्त प्रवृत्ति खड़ी करके अतिरिक्त रोजगार उपलब्ध कराने का भी भरसक प्रयास करे।
- उद्योग-सभा की एक समाधान समिति रहेगी, जिसके द्वारा आपसी मतभेद आदि के निर्णय किये जायेंगे। ये निर्णय अंतिम होंगे और सभी पर बन्धनकारक होंगे।
- सामान्यतः इस उद्योग-सभा की अपनी कोई स्वतंत्र अचल सम्पत्ति नहीं रहेगी। अपने दैनन्दिन कार्य चलाने के लिए सभी सदस्य, (श्रमिक, प्रबन्धक, व्यवस्थापक, कर्मचारी आदि) अपना सदस्यता-शुल्क देंगे।
- उद्योग-सभा अपने सदस्यों के शिक्षण, निवास, चिकित्सा, मनोरंजन और विकास के लिए भी शनैः-शनैः प्रवृत्तियाँ खड़ी करती जायगी, जिससे न्यूनतम जीवन-मान सभी सदस्यों को उपलब्ध हो सके।

इस दिशा में धीरे-धीरे ही प्रयास किया जा सकता है। लेकिन आज इस बात की आवश्यकता जरूर है कि श्रमिक-संगठनों के क्षेत्र से राजनीति का विसर्जन किया जाय, जिससे श्रमिक सच्चे मानों में संगठित हो सकें तथा उद्योग-संचालक, उद्योगपति और श्रमिकों में पैदा की गयी काल्पनिक खाई को पाटा जा सके।

यह योजना केवल सुझाव मात्र है। आशा है कि श्रमिक-समस्याओं में रुचि रखनेवाले सज्जन और नागरिक इस पर विचार करेंगे तथा कोई व्यावहारिक मार्ग निकालकर श्रमिकों में व्याप्त असुरक्षा और समाज में व्याप्त अशांति को दूर करने का प्रयास करेंगे, तो देश को बहुत लाभ होगा।

—नरेन्द्र कुमार दुबे

अहिंसक नवरचना के मासिक

"जीवन-साहित्य"

का गांधी-जन्म-शताब्दी के उपलक्ष्य में

नया विशेषांक

वैष्णव जन अंक

सौ पृष्ठ के इस विशेषांक में पाठकों को ऐसी सामग्री मिलेगी, जो जीवन-निर्माण की प्रेरणा देगी। गांधीजी के मानव-रूप पर मार्मिक लेख, प्रेरक बोधकथाएँ तथा वैष्णव जनों के पावन चरित।

पूरा अंक सुपाठ्य तथा संग्रहणीय होगा।

संपादक : हरिभाऊ उपाध्याय : यशपाल जैन

विशेषांक जनवरी १९६९ में प्रकाशित होगा। दिसम्बर के अन्त तक ग्राहक बन जानेवालों को विशेषांक बिना अतिरिक्त मूल्य के मिलेगा।

वार्षिक शुल्क ५ रु० : विशेषांक रु० २.५०

तत्काल मनीआर्डर भेजकर ग्राहक बनें।

व्यवस्थापक

"जीवन-साहित्य"

सस्ता साहित्य मण्डल, नयी दिल्ली-१

 www.vinoba.in

महान क्रान्तिकारी पं० परमानन्दजी

गदर से ग्रामदान की ओर

"विश्वविद्यालयों की बात कहते हो ? मेरी चले तो देश के दिमाग को भ्रष्ट करनेवाले इन केन्द्रों में पेट्रोल छिड़ककर आग लगा दूँ ! देश की युवा पीढ़ी को गुमराह करनेवाली यह गुलामी के जमाने की तालीम अब तक चलायी जा रही है, यह एक भयंकर अपराध है, और इसके अपराधियों को···!" जिस व्यक्ति की प्रेरणा से सैकड़ों युवकों ने फाँसी की सजा को शहादत का शृङ्गार माना हो, और आजादी पर मर मिटने के लिए मौत को भी मात दे दी हो, जिसकी धधकती हुंकार ने हजारों को निगल लिया हो, जिसने अपने जीवन के २३ साल काले-पानी की सजा और ८ साल जेल की यातनाओं में बिताये हों, जिसे तीन-तीन बार ब्रिटिश सरकार फाँसी की सजा का फैसला देकर भी फाँसी न दे सकी हो, ऐसे ७६ वर्षीय जवान पं० परमानन्दजी की वाणी देश की परिस्थिति को देखकर उग्र हो जाय तो कोई आश्चर्य की बात नहीं।

लेकिन रौद्रता के बावजूद निगाहों से झाँकता हुआ उनका दर्दभरा दिल और बीच-बीच में शिथिल पड़ जानेवाली आवाज की कम्पन में समायी हुई कसक सम्पर्क में आनेवाले हर संवेदनशील व्यक्ति के अन्तर को एक बार मथ ही डालती है—चाहे वह हिंसा की शक्ति में भरोसा करता हो या अहिंसा में।

हमें जब पं० परमानन्दजी से मिलने का सुयोग हुआ तो सबसे अधिक उत्सुकता इस बात को जानने की थी कि इतने खूँखार अतीतवाले व्यक्ति को ग्रामदान की अहिंसक क्रान्ति में लगने की प्रेरणा कैसे हो गयी और ग्रामदान के किस पहलू ने उनको सबसे अधिक अपनी ओर खींचा है।

निश्चित समय पर जब हम उनसे मिलने पहुँचे तो हमारे प्रश्नों के पूर्व ही आत्मीयता की प्यारभरी आवाज में हमें ललकारता हुआ-सा उनका प्रश्न सामने आया—"क्यों बेटे, मौत से खेलने को तैयारी है ? कितनों की टीम जुटा सकते हो इस खेल के लिए ?" हम अचकचा गये। हम अहिंसक क्रान्ति के सिपाही, मौत से डरते नहीं, लेकिन हमें तो जीवन का खेल खेलना है, मौत का खेल !

"जीवन को होम कर डालने की तैयारी के बिना क्रान्ति नहीं होती बेटे।" पं० परमानन्दजी ने कहा। और तब हमारे सामने पंडितजी की मंशा स्पष्ट हुई। लेकिन जब हमने अपने मन की उक्त भावना व्यक्त की

पं० परमानन्दजी : बुढ़ापे की जवानी

तो बोल उठे, "यह जीवन का खेल ही है बेटे, मौत की तीन सजाएँ, तेईस साल कालापानी और फिर आठ साल की जेल भुगतने के बाद अब तक जिन्दा हूँ, तो लगता है इसी काम के लिए। गांधी से मेरा मतभेद रहा। हम दोनों दो पथ के अनुगामी, लेकिन मैत्री थी, और मैं कायल था गांधी के चरित्र का।"

"आपको सर्वोदय-विचार के प्रति आकर्षण क्यों हुआ ?"

"क्योंकि गांधी-विनोबा ने सारे जगत को एक (unite) कर दिया है। खण्ड-चिन्तन (Sectional thinking) कहीं है ही नहीं। मैंने कम्युनिज्म का बहुत अध्ययन किया है, वह एकांगी, खण्ड-दर्शन है, मानव की समग्र मुक्ति उसमें सम्भव ही नहीं है। दूसरी बात कि अब पूरी जनता को विद्रोही बनाना है, और उसके लिए शस्त्र का नहीं विचार का माध्यम चाहिए। शस्त्र के माध्यम से जो भी क्रान्ति होगी खण्डित होगी, वह सम्पूर्ण मानव को लेकर चल नहीं सकती। पिछले बीस-इक्कीस सालों तक मैं मौन रहा, और स्वराज्य के बाद देखता रहा कि गुलामी से मुक्ति की तड़प देश के कर्णधारों में कितनी है ?...लेकिन बहुत ही दर्द के साथ कहना पड़ता है कि किसीमें देश की मुक्ति के लिए तड़प नहीं है, उसके लायक चरित्र नहीं है। अगर इन नेताओं, कर्णधारों के पास चरित्र होता, इनके सामने देश की समस्याएँ होतीं, तो ये इतनी पार्टियाँ बना-बनाकर कुर्सी-दौड़ में लगे रहते ? जिसके दिल में देश के लिए कसक नहीं है, भारत के इतिहास की प्रतिछाया (reflection) नहीं है, वह आदमी किस काम का ? राजनीति ने सबको इतना पतित कर दिया है कि अब उनसे कोई भरोसा नहीं। वे सत्ता के भूखे हैं। अब भरोसा है तो नयी पीढ़ी से, जिसके अन्दर इस युग के ऐतिहासिक कलंकों को मिटा देने की ताकत है, बशर्ते कि वह अपनी शक्ति पहचानकर सही दिशा में आगे बढ़े, पतित करने की राजनीति के फन्दे में फँस-कर न रह जाय।"

पंडितजी की अन्तर-वेदना उनके चेहरे पर उतर आयी थी, और हम उससे अप्रभावित नहीं रह सके थे। हमने पूछा, "इस आन्दोलन में लगे हम कार्यकर्ताओं के लिए आपका क्या सन्देश है ?"

"मेरा अपना अलग से कोई घर नहीं, सारा भारत ही मेरा घर है। और तुम सब मेरे बेटे-बेटी हो। यह जो ग्रामदान का आन्दोलन है, वह भारतीय जनक्रान्ति का 'लौंग मार्च' (long-march) है। मैं अपने सब बेटे-बेटियों और दोस्तों से कहना चाहता हूँ कि भारत के पास हजारों सालों की संचित आत्मशक्ति है, उसका सम्बल लेकर आगे बढ़ो और भारत की गरीब जनता के जीवन के साथ एकरूप होकर पूरे देश को क्रान्तिकारी बना डालो। यह विचार दुनिया को एक करनेवाला विचार है, मानव को मानव बनानेवाला विचार है, इसमें अपना जीवन होम कर दो। भारत के शहीदों की आत्माएँ तुम्हारी और निहार रही होंगी,—

बिहार के ग्रामदानी गाँव : कैसे आगे बढ़ रहे हैं ?

बिहार राज्य की ग्रामीण अर्थनीति पर भूदान या ग्रामदान-आन्दोलन की कैसी छाप पड़ी है, इसका पूरा लेखा-जोखा करने का शायद अभी समय नहीं आया है। ग्रामदान-आन्दोलन का प्रभाव-क्षेत्र ३० हजार से अधिक गाँवों तक विस्तृत हो चुका है, किन्तु इनमें से अधिकांश उत्तर बिहार के हैं। इन ३० हजार गाँवों में से ज्यादातर गाँव हाल ही में विनोबाजी को भेंट किये गये हैं। विनोबाजी के ग्रामदान-आन्दोलन के सन्देश को गाँव-गाँव तक फैलाने में ज्यादा दिलचस्पी है, बजाय इसके कि वे ग्रामीण नव-निर्माण की पूर्व-योजना की तफसील में जायँ।

मौजूदा स्थिति यह है कि नये ग्रामदानी गाँवों में से अभी कुल १८ गाँव अपने यहाँ ग्रामदान-अधिनियम के अनुसार ग्रामसभाओं का गठन कर पाये हैं। इनमें से १२ गाँव पूर्णियाँ जिले के हैं, ५ मुजफ्फरपुर के और १ दरभंगा जिले का।

विनोबाजी ने बिहार ग्रामदान-तूफान शुरू किया, उसके पहले ही बिहार विधान-सभा ने बिहार ग्रामदान-अधिनियम पारित कर लिया था। घोषित ग्रामदानी गाँवों की पुष्टि शीघ्र हो सके और गाँव में ग्रामसभा चुनी जाकर शीघ्र सक्रिय हो सके, इसके लिए बिहार ग्रामदान-अधिनियम का संशोधन होना चाहिए। इसके बगैर पिछड़े हुए गाँवों की सामाजिक और आर्थिक स्थिति के विकास की गति तेज नहीं हो पायेगी। राज्य के उत्तरी भाग में हिमालय और गंगा के बीच में ऐसे गाँवों की तादाद अधिक है। ग्रामदान-आंदोलन के पीछे जो आदर्शवादी तत्त्व है, उसका अकसर गाँव की तात्कालिक कुरूप सामाजिक आर्थिक-परिस्थिति से टकराव होता रहता है, लेकिन इसके साथ ही साथ परम्परा से बँधे हुए ग्रामीण समाज पर इसकी छाप मामूली नहीं है।

आलोचकों को उत्तर

आलोचकों की तरह ही श्री विनोबा भावे और श्री जयप्रकाश नारायण यह जानते हैं

जितेन्द्र सिंह

कि भूदान-ग्रामदान आन्दोलन का अधिकांश कार्य कागजी लिखा-पढ़ी में अपना अस्तित्व रखता है, लेकिन दोनों में से कोई भी इस जाहिर तथ्य से हताश नहीं हैं।

अपने आलोचकों के लिए विनोबाजी का उत्तर यह है कि जिस मतदान-पत्र द्वारा मतदाता अपने प्रतिनिधियों का चुनाव करते हैं वह कागज का एक टुकड़ा ही होता है, लेकिन उसने सन् १९६७ के आम चुनाव के बाद देश की राजनीतिक संरचना में बुनियादी परिवर्तन ला दिया है।

आकाशवाणी द्वारा प्रसारित श्री जय-प्रकाश नारायण की एक वार्ता में इसका एक और विशिष्ट उत्तर दिया गया। जयप्रकाशजी ने कहा कि 'बिहार अधिकतम भूमि-सीमा-निर्धारण अधिनियम' के अन्तर्गत अगस्त तक मुश्किल से ५ हजार एकड़ भूमि प्राप्त होकर भूमिहीनों में बाँटी गयी, लेकिन बिहार प्रदेश में कम-से-कम ३ लाख ४० हजार एकड़ भूदान की भूमि भूमिहीनों में वितरित हुई है और आगामी कुछ वर्षों में कम-से-कम डेढ़ लाख एकड़ भूमि और बाँटी जायेगी।

यह सही बात है कि सन् १९५३ के बाद बिहार में भूदान में जो २१ लाख एकड़ जमीन प्राप्त हुई है, उसका अधिकांश भाग खेती के लायक नहीं है। यह भी सही है कि ज्यादा-तर दान कागज पर हैं। फिर, यह भी सच है कि जो जमीन खेतीलायक है उसके पुनर्वितरण में १५ वर्ष लग गये और तब भी पुनर्वितरण का काम बाकी है। लेकिन श्री जयप्रकाश नारायण का तर्क यह है कि बिहार के 'अधिकतम भूमि-सीमा-निर्धारण अधिनियम' के अन्तर्गत जितनी जमीन प्राप्त हो पायी उससे कहीं अधिक जमीन सर्वोदय-कार्यकर्ताओं द्वारा वितरित हुई। ग्रामदान-आन्दोलन का लोगों पर कैसा प्रभाव पड़ा उसका अन्दाज दरभंगा जिले के समस्तीपुर सबडिवीजन के ग्रामदानी गाँव रध्युदयपुर के विकास-कार्य के अवलोकन करने से हो जाता है।

रध्युदयपुर की नवगठित ग्रामसभा ने गाँव के विकास का एक कार्यक्रम बनाया है। गाँव की जनसंख्या ३०० है, जिसमें से २०० निर्धन भूमिहीन मजदूर हैं। ग्रामसभा ने लघु-सिंचाई द्वारा गाँव को अन्नोत्पादन में स्वाव-लम्बी बनाने की योजना तैयार की है।

इस गाँव की आबादी में उच्च जातीय भूमिहार अच्छी संख्या में हैं। साग-भाजी की खेती में कुशल कोइरी जाति के लोगों की आबादी गाँव में जहाँ-तहाँ बिखरी हुई है। गाँव में हरिजन भी हैं, जो अब गाँव के कुएँ से पानी ले सकते हैं। पहले सिर्फ सवर्ण जाति के लोगों के लिए ही कुएँ सुरक्षित थे। जाति-वाद से दबे हुए बिहार-जैसे प्रदेश के गाँव के लोगों के लिए यह कोई मामूली फायदा नहीं है। लघु-सिंचाई का कार्यक्रम सर्वोदय-कार्य-कर्ताओं द्वारा बिहार रिलीफ कमेटी के तत्वा-वधान में चल रहा है, जो एक गैरसरकारी संस्था है। श्री जयप्रकाश नारायण बिहार रिलीफ कमेटी के अध्यक्ष हैं। कुछ विदेश की सामाजिक कार्य करनेवाली संस्थाओं ने आर्थिक और तकनीकी सहयोग देने का आश्वा-सन दिया है। लघु-सिंचाई कार्यक्रम की देख-रेख करनेवाले सर्वोदय के कार्यकर्ता श्री वजीर

—कि जिस भारत को उन्होंने लहू से सींचा, देखें उसको रेगिस्तान बनाने से रोकता कौन है ?"

पंडित परमानन्दजी का ओजस्वी व्यक्तित्व और दीप्त हो चला था, उनके अन्तर का भाव-प्रवाह वाणी की गति से भी तीव्रतर था। गदर पार्टी के संस्थापक सदस्य, इस महान् क्रान्तिकारी विभूति के—उम्र जिनके जीवन की गति को जरा भी शिथिल नहीं कर पायी है—सान्निध्य में आकर हम स्फूर्ति से भर गये थे, और ग्रामदान के आदिस्रोत-स्थल-बुन्देलखण्ड में आपका प्रत्यक्ष आशी-र्वाद और प्रसादस्वरूप सहयोग इस आन्दो-लन को मिलने लगा है, इस ऐतिहासिक महत्व की घटना को जानकर अपने अन्दर एक नयी शक्ति का अनुभव करने लगे थे।

—रामचन्द्र राही

www.vinoba.in

खाँ ने मुझसे कहा—"हमारी मौजूदा कठिनाइयाँ चाहे जैसी हों, हम उम्मीद और भरोसे के साथ उस नये भविष्य की ओर देख रहे हैं, जब सरकार के आगे हाथ फैलाने के बजाय अपनी ही कोशिश और रहनुमाई की बदौलत हम ग्राम-स्वराज्य को साकार कर सकेंगे। जो सरकार लोकतांत्रिक संविधान के अन्तर्गत काम कर रही है, उसे तो हमारी मदद करनी ही है, लेकिन ग्रामदान ने हमें सिखाया है कि हमें अपनी सामाजिक, आर्थिक समस्याएँ सुलझाने के काम में अपनी ओर से ही पहल करनी चाहिए। सार्वजनिक जीवन और प्रशासन में निहित स्वार्थ के लोगों द्वारा जो रुकावटें पैदा की जाती हैं उनकी परवाह न करके हमें अपनी तरक्की के रास्ते पर आगे बढ़ते जाना है।"

बेराई की गिरने-उठने की मिसाल

बिहार प्रदेश के मुंगेर जिले में बेराई एक गाँव है। बिहार का यह वह गाँव है, जो वर्षों पहले ग्रामदान की घोषणा कर चुका है। बेराई का उदाहरण इस बात की मिसाल पेश करता है कि कैसे गाँव के लोगों ने उठकर-गिरकर ग्रामदान आन्दोलन के विभिन्न पहलुओं का अनुभव प्राप्त किया है। बेराई में यादव और हरिजनों की संख्या अधिक है। अपने प्रारम्भिक जोश-खरोश के बहाव में आकर बेराई के लोगों ने न सिर्फ अपनी-अपनी जमीन, बल्कि मकान और गल्ले का भण्डार भी ग्रामसभा को सौंप दिया। उन लोगों ने सहकारी खेती भी शुरू कर दी। गाँव के लोगों की अपनी पारिवारिक और व्यक्तिगत प्रतिस्पर्द्धा के कारण सामाजिक खींचातानी शुरू हुई। इसके चलते ग्रामसभा के सुचारू रूप से काम करने में कठिनाई आयी। बाद में गाँव के जीवन को नया रूप देने में व्यक्तिगत और पारिवारिक महत्व को जगह मिली। अब ग्रामसभा गाँव की जमीन तथा अन्य साधनों की सिर्फ कानूनी हकदार है। जमीन के जोतने-बोने और सम्पत्ति को उपयोग में लाने के सब अधिकार परिवारों को वापस दे दिये गये हैं। भूमिहीन किसानों में कुछ जमीन फिर से बाँट दी गयी है और सिर्फ ११ एकड़ का एक प्लाट सहकारी खेती के लिए अलग रखा गया है।

कुछ उपलब्धियाँ

बेराई की ग्रामसभा एक विद्यालय भी चलाती है। सहकारी खेती की जमीन की उपज द्वारा गाँव के गरीब विद्यार्थियों के लिए न सिर्फ भोजन की व्यवस्था हो जाती है, बल्कि उसीसे बच्चों की विद्यालय की फीस और पुस्तकों की भी व्यवस्था हो जाती है। गाँव में पारिवारिक खेती करनेवाले व्यक्ति अपनी उपज का एक हिस्सा ग्रामसभा के कोष में दान करते हैं। गाँव में अम्बर चरखा-केन्द्र खोला गया है। बेराई में सबसे महत्वपूर्ण और खास बात यह हुई है कि वहाँ के दुसाध, जो कि हरिजनों में भी निचली श्रेणी के लोग हैं, और जिनकी हत्या और अपराध की परंपरा रही है, अब नयी जिन्दगी बिता रहे हैं।

बोधगया के समीप का मनपहाड़ नामक गाँव का एक उदाहरण है आदिवासी ग्रामीणों का। इस गाँव के अधिकांश लोग भुइयाँ समुदाय के हैं। ये लोग वर्षों से खेतों और जंगलों में चोरी करके अपना जीवन-यापन करते थे। उनमें से अधिकांश ने अब खेती-बारी शुरू कर दी है। उन लोगों ने अपने खेतों में सिंचाई के तालाब, छोटे बाँध और सिंचाई की नालियाँ बना ली हैं, जिसके जरिये वे अपने छोटे-छोटे खेतों की सिंचाई कर लेते हैं। वे उन खेतों से अपने लिए साल में १० महीने की जरूरत भर का अनाज उपजा लेते हैं। विकास-कार्यक्रमों में भागीदार बनने के लिए उन्होंने अपना एक श्रमिक-संगठन भी बनाया है।

आधिकारिक मूल्यांकन

गया जिले के दो ग्रामदानी गाँव, गांधीधाम तथा भूपनगर के आधिकारिक मूल्यांकन के अनुसार यद्यपि भूमि के पुनर्वितरण के बाद औसत आमदनी में थोड़ी-सी बढ़ोतरी हुई है, लेकिन भूमि, पशुधन और खेती के साधनों की उन्नति हुई है। योजना-आयोग के परियोजना मूल्यांकन संगठन ने अपनी रिपोर्ट में कहा है—सन् १९५७ से १९६७ की अवधि में भूदान की नयी बस्तियों के लोग क्रमशः अपने को अधिक मुक्त महसूस करते रहे। जमीन मिल जाने पर भूमिहीनों की सामाजिक हैसियत बदल जाती है। उन्हें कुछ आर्थिक सुरक्षा भी प्राप्त हो जाती है।

कई ऐसे उदाहरण सामने आये हैं, जिनमें सर्वोदय की कार्य-प्रणाली ने व्यक्तियों का हृदय-परिवर्तन करने में सहायता पहुँचायी है। चंपारण जिले में श्री बेथा नाम के संयुक्त समाजवादी दल के एक कार्यकर्ता हैं। वे उस जिले के 'रॉबिन हुड' कहे जाते हैं, क्योंकि वे 'जनता की अदालत' बैठाते हैं, कर इकट्ठा करते हैं और सार्वजनिक सड़क और स्कूल बनवाते हैं। उन्होंने अपने आपको ग्रामदान का स्वयंसेवक बना लिया है।

प्रशिक्षित कार्यकर्ताओं की कमी ग्रामदान-आन्दोलन की मुख्य समस्या है। ग्रामदानी गाँवों में ग्रामसभा बन सके और सुचारु रूप से काम कर सके इसके लिए ग्रामदान-आन्दोलन को कार्यकर्ताओं के सैन्यदल की आवश्यकता है। ग्रामदान के प्रसार-प्रचार के लिए आचार्य विनोबा भावे ने ५ हजार खादी-कार्यकर्ताओं का सहयोग प्राप्त किया है। श्री जयप्रकाश नारायण शान्ति-सेना मण्डल के अध्यक्ष हैं। शान्ति-सेना मण्डल ने ६ हजार कार्यकर्ताओं को गाँवों में न केवल जातिगत तनावों को कम करने और साम्प्रदायिक सौमनस्य बनाये रखने, बल्कि ग्राम-विकास की योजनाओं की शुरुआत करने की पद्धति में प्रशिक्षित करने का निर्णय लिया है।

ग्रामदान-आन्दोलन की वर्तमान अवस्था में भूमि का वैध स्वामित्व ग्रामसभा का है, लेकिन ग्रामसभा किसानों को उनकी जमीन पर खेती-बारी करने की इजाजत देती है। ग्रामदान के इस संस्करण में प्रत्येक किसान को अपनी भूमि का बीसवाँ हिस्सा गाँव के गरीब भूमिहीन के लिए अलग करना पड़ता है। ग्रामदान में यह भी शर्त रखी गयी है कि प्रत्येक किसान अपनी खेती की उपज का चालीसवाँ भाग ग्रामसभा के ग्रामकोष में दान करता रहेगा।

गाँव में सामूहिक साधनों की व्यवस्था करने के लिए मजदूरी या नौकरी करनेवाले गाँव के निवासी से उसकी आय के तीसवें भाग यानी महीने में एक दिन की मजदूरी को ग्रामकोष में जमा करने लिए कहा जाता है।

इसी बीच जयप्रकाश नारायण ग्रामदान-आन्दोलन के राजनैतिक स्वरूप-निर्धारण के

अपने आयोजन में अग्रसर हैं। उनकी योजना के अनुसार प्रतिनिधियों के चुनाव में ग्रामदानी गाँवों की ग्रामसभाओं को निर्णायक भूमिका निभाने का अवसर प्राप्त होगा।

लोकतांत्रिक क्रान्ति की यह योजना इस तथ्य पर आधारित है कि विभिन्न राजनीतिक दलों की मर्जी से आम चुनाव के लिए प्रतिनिधि चुने जाने की वर्तमान प्रणाली पर अन्ततोगत्वा ग्रामीण समुदाय की अपनी आवाज हावी हो सकेगी।

श्री जयप्रकाश नारायण के अनुसार एक दिन ऐसा आयेगा कि राजनैतिक दलों के उच्च नेताओं द्वारा नामांकित उम्मीदवारों के मुकाबिले ग्रामसभाओं द्वारा प्रस्तावित उम्मीदवार चुनाव में बाजी मार ले जायेंगे। वे महसूस करते हैं कि इससे नीचे की इकाइयों में उस वास्तविक ग्राम-स्वराज्य या लोकतंत्र की स्थापना हो सकेगी, जिसकी महात्मा गांधी ने कल्पना की थी।

आगामी मध्यावधि चुनाव के दौरान बिहार तथा कुछ अन्य प्रदेशों के ग्रामदानी कार्यकर्ता अपने प्रदेश के इस कार्यक्रम के शैक्षिक पहलू पर अपनी पूरी शक्ति लगाने की योजना में लगे हुए हैं।

—'टाइम्स आफ इंडिया' के २ नवम्बर '६८ के अंक से साभार।

विनोबाजी का संशोधित कार्यक्रम

१० दिसम्बर '६८	सासाराम	(शाहाबाद)
११ " "	विक्रमगंज	"
१२–१६ " "	आरा	"
२०–२१ " "	इलाहाबाद	(उ०प्र०)
२२–२४ " "	आरा	(शाहाबाद)

२५ दिसम्बर '६८ को पटना—सायंकाल

पता

२४-१२-'६८ तक	२५-१२-'६८ के बाद
विनोबा-निवास	विनोबा-निवास
मा० जिला सर्वोदय मण्डल, बाबू बाजार, आरा,	मा० बिहार ग्रामदान-प्राप्ति संयोजन समिति, कदम कुआँ,
जि० शाहाबाद, बिहार	पटना–३

गांधी-शताब्दी वर्ष १९६८-६९

गांधी-विनोबा के ग्राम-स्वराज्य का संदेश गाँव-गाँव, घर-घर पहुँचाने के लिए निम्न सामग्री का उपयोग कीजिए :

पुस्तकें—

१. **जनता का राज :** लेखक—श्री मनमोहन चौधरी, पृष्ठ ६२, मूल्य २५ पैसे

२. **Freedom for the Masses :** लेखक—श्री मनमोहन चौधरी : 'जनता का राज' का अनुवाद, पृष्ठ ७६, मूल्य २५ पैसे

३. **शांति-सेना परिचय :** लेखक—श्री नारायण देसाई, पृष्ठ ११८, मूल्य ७५ पैसे

४. **हत्या एक आकार की :** लेखक—श्री ललित सहगल, पृष्ठ ९६, मूल्य ३ रु० ५० पैसे

५. **A Great Society of Small Communities :** ले० सुगत दासगुप्ता, पृष्ठ ७८, मूल्य १० रु०

फोल्डर—

१. गांधी : गाँव और ग्रामदान
२. गांधी : गाँव और शांति
३. ग्रामदान : क्यों और कैसे ?
४. ग्रामदान : क्या और क्यों ?
५. ग्रामदान के बाद क्या ?
६. ग्रामसभा का गठन और कार्य
७. गाँव-गाँव में खादी
८. सुलभ ग्रामदान
९. देखिए : ग्रामदान के कुछ नमूने
१०. गांधीजी के रचनात्मक कार्यक्रम

पोस्टर—

१. गांधी ने चाहा था : सच्चा स्वराज्य
२. गांधी ने चाहा था : स्वावलम्बन
३. गांधी ने चाहा था : अहिंसक समाज
४. ग्रामदान से क्या होगा ?
५. गांधी जन्म-शताब्दी और सर्वोदय-पर्व

प्रदेश के सर्वोदय-संगठनों और गांधी जन्म-शताब्दी समितियों से सम्पर्क करके यह सामग्री हजारों-लाखों की तादाद में प्रकाशित, वितरित कराने का प्रयत्न करना चाहिए।

शताब्दी-समिति की गांधी रचनात्मक कार्यक्रम उपसमिति, टुंकलिया भवन, कुन्दीगरों का भैरु, जयपुर–३ (राजस्थान) द्वारा प्रसारित।

सीमा-क्षेत्र में सम्मेलन :

www.vinoba.in

क्रान्ति की मशाल जलती रहेगी

उत्तराखण्ड के चमोली जिले के मध्य में स्थित गोपेश्वर का एक छोटा-सा गाँव, अब जिला हेडक्वार्टर बनने के कारण एक नयी पर्वतीय नगरी के रूप में विकसित हो रहा है। गत २८ से ३१ अक्तूबर तक वह चहल-पहल का केन्द्र रहा। हिमालय की कश्मीर से लेकर उत्तराखण्ड तक की और राजस्थान की सीमा में रचनात्मक कार्य करनेवाली संस्थाओं के १०० से अधिक कार्यकर्ता और श्री जयप्रकाश नारायण के अलावा विभिन्न रचनात्मक कार्यक्रमों में लगे प्रमुख लोग उपस्थित थे। शिविर का उद्घाटन श्री ढेबर भाई ने तथा समापन श्री जयप्रकाश नारायण ने किया। एक छोटी खादी-ग्रामोद्योग प्रदर्शनी भी लगायी गयी थी, जिसमें इस क्षेत्र के बने हुए ऊनी वस्त्रों का प्रदर्शन किया गया था।

उत्तराखण्ड में सर्वोदय-कार्य की नींव गांधीजी की तपस्विनी शिष्या सरलाबहन द्वारा सन् १९४० से ही पहाड़ों में निवास और सन् १९४६ में कौसानी में लक्ष्मी आश्रम की स्थापना के साथ पड़ चुकी थी। कई वर्षों तक गांधीजी की दूसरी शिष्या मीराबहन भी हिमालय-क्षेत्र में रहीं। सन् १९६१ से उत्तराखण्ड सर्वोदय-मण्डल विभिन्न क्षेत्रों में बिखरे हुए सेवकों का मार्गदर्शन करता रहा है। फलतः क्षेत्र-स्तर की विकास संस्थाएँ उग आयीं। शराब की दूकानों पर शान्तिमय धरना हुआ और देशी शराब की ८ दुकानें बन्द हुईं। उत्तरकाशी का जिलादान हुआ, तिब्बत की सीमा से मिला हुआ दूसरा सीमांत जिला चमोली अब जिलादान के निकट है। धारचूला का प्रखण्डदान हुआ है और अन्य पर्वतीय जिलों में भी कुछ ग्रामदान हुए हैं।

अक्तूबर १९६२ में भारत-चीन सीमा-संघर्ष के बाद देश के उपेक्षित सीमा-क्षेत्र की ओर सारे देश का ध्यान आकर्षित हुआ। रचनात्मक कार्य की अखिल भारतीय संस्थाओं ने इन क्षेत्रों में अहिंसक सुरक्षा की सुदृढ़ दीवार खड़ी करने की दृष्टि से अपने सेवा-केन्द्र प्रारम्भ किये। इनमें से खादी-ग्रामोद्योग आयोग और गांधी-स्मारक निधि मुख्य थी। ये संस्थाएँ अपनी परम्परागत कार्य-पद्धतियों और कार्यक्रमों को लेकर इस क्षेत्र में गयीं। दूसरी ओर स्थानीय अभिक्रम से खड़े हुए संगठनों ने स्थानीय परिस्थितियों और आवश्यकताओं के आधार पर अपने कार्यक्रम निश्चित किये। फलतः समन्वय समिति के सामने सबसे बड़ा काम इन दो धाराओं का समन्वय करने का था। पहाड़ की परिस्थितियाँ कदम-कदम पर स्वतंत्र कर्तृत्व-शक्ति और स्थानिक निर्णय की माँग करती हैं। केन्द्रित संस्थाओं को अपने नियम-कानूनों का बोझ ढोने के लिए नौकरशाही पर आश्रित रहना पड़ता है। अतः शुभेच्छा से प्रारम्भ किये गये उनके कार्यक्रम स्थानीय जनता को गहराई से स्पर्श न कर सके। वे वहाँ के जीवन का अंग न बन पायीं। दूसरी ओर स्थानीय संस्थाएँ खादी को उत्पादन-बिक्री के चौखटे से मुक्त कर वस्त्र-स्वावलम्बन के कार्यक्रम को अपना पायी हैं। वन-संपदा यहाँ के आर्थिक जीवन का मुख्य आधार है। पर्वतीय जिलों की ४५ प्रतिशत धरती पर वन हैं। उत्तरकाशी में तो ८४ प्रतिशत वन हैं, इसलिए वन ही यहाँ के लोगों को रोजगार दे सकते हैं। इस दिशा में गोपेश्वर स्थित दशौली ग्राम-स्वराज्य संघ द्वारा प्रेरित 'मंडल नागपुर श्रम संविदा सहकारी समिति' ने खुली होड़ में वन-विभाग से जंगल का ठीका लेकर अग्रगामी कार्य किया है। जड़ी-बूटियाँ इकट्ठी करने एवं लीसे से तारपीन बनाने के उद्योग की ओर भी संस्थाओं का ध्यान जाने लगा है।

गोपेश्वर की चर्चाओं का एक स्पष्ट निष्कर्ष तो यह निकला कि हिमालय-क्षेत्र में केवल विकेन्द्रित पद्धति से ही रचनात्मक कार्य किये जा सकते हैं। भागीरथी का प्रवाह समुद्र से हिमालय की ओर नहीं मोड़ा जा सकता, दूसरे एक ऐसे क्षेत्र को जो गंगोत्री, यमुनोत्री, बद्री और केदार जैसे तीर्थों के कारण सारे देश के साथ समरस रहा हो, जिसने देश को उच्च कोटि के प्रशासक, साहित्यकार, सैनिक और स्वातंत्र्य-संग्राम के सेनानी दिये हों, संरक्षित क्षेत्र की तरह नहीं रखा जा सकता। यह तय किया गया कि खादी-कमीशन एवं विभिन्न खादी-संस्थाओं के कार्यों के संचालन एवं मार्गदर्शन के लिए उत्तराखण्ड खादी-ग्रामोद्योग समन्वय समिति का संगठन किया जाय। इस समिति के निर्णय खादी-कमीशन को मान्य होंगे और इसमें पर्वतीय जिलों की स्थानीय संस्थाओं के प्रतिनिधियों के अलावा खादी-कमीशन, खादी-बोर्ड, गांधी आश्रम, गांधी-स्मारक निधि, पर्वतीय विकास परिषद् के इस क्षेत्र में रहनेवाले प्रतिनिधि होंगे। समन्वय समिति के मंत्री इसके पदेन सदस्य होंगे। समिति का सचिव खादी-कमीशन द्वारा नियुक्त ऐसा उच्चाधिकारी होगा, जो कमीशन के इस क्षेत्र के कार्यों के लिए उत्तरदायी होगा।

शिविर की समाप्ति के दिन पुलिस की परेड-ग्राउण्ड में जे० पी० की सार्वजनिक सभा का आयोजन किया गया था। इस अवसर पर ढोल-नगाड़ों के गगन-भेदी स्वरों के साथ "हमारा मंत्र, जय जगत्; हमारा तंत्र, ग्रामदान" का घोष करती हुई एक टोली ने इस जिले में अब तक प्राप्त लगभग ७०० ग्रामदान समर्पित किये।

—सुन्दरलाल बहुगुणा

कस्तूरबा-सेविका-सम्मेलन

कस्तूरबा गांधी राष्ट्रीय स्मारक ट्रस्ट द्वारा आगामी फरवरी, १९६९ के प्रथम सप्ताह में कस्तूरबाग्राम, इन्दौर में अ० भा० कस्तूरबा-सेविका-सम्मेलन आयोजित किया जा रहा है। बा-बापू जन्म-शताब्दी सम्बन्धी अपने कार्यक्रमों का शुभारम्भ ट्रस्ट इस सम्मेलन से करेगा, जिसका उद्घाटन राष्ट्रपति डा० जाकिर हुसेन करेंगे। इस सम्मेलन में देश भर के विभिन्न भागों से लगभग ८०० सेविकाएँ भाग लेंगी। (सप्रेस)

भूदान तहरीक

उर्दू भाषा में अहिंसक क्रांति का संदेशवाहक पाक्षिक

वार्षिक शुल्क : ४ रुपये

सर्व सेवा संघ प्रकाशन, वाराणसी-१

आन्दोलन के समाचार

उत्तर प्रदेश की चिट्ठी

उत्तर प्रदेश ग्रामदान-अभियान के लिए आगरा क्षेत्र के मंत्री श्री चन्द्रदत्त पाण्डेयने सात जिलादान की जो योजना बनायी है, उसका स्थूल कार्यक्रम इस प्रकार है :—

१५ दिसम्बर '६८ से १९ फरवरी '६९ तक फर्रुखाबाद, २४ दिसम्बर '६८ से ११ सितम्बर '६९ तक मैनपुरी, २ जनवरी से २ जुलाई '६९ तक एटा, ११ जनवरी से १२ जुलाई '६९ तक मथुरा, १२ फरवरी से १५ अगस्त '६९ तक आगरा, ३ मार्च से २२ सितम्बर '६९ तक अलीगढ़, १२ मार्च से २ अक्तूबर '६९ तक इटावा का जिलादान करने का निश्चय किया है।

टिहरी जिले के घनसाली गाँव में जिला गांधी-शताब्दी समिति की ओर से त्रिदिवसीय (१६-१७-१८ नवम्बर) शिविर हुआ जिसमें लोकसेवकों, राजनीतिज्ञों व कर्मचारियों ने भाग लिया। अंतिम दिन एक सार्वजनिक सभा हुई, जिसमें शराबबंदी की माँग की गयी। इस कार्यक्रम को विधायक स्वरूप देने के लिए उस क्षेत्र में ग्रामदान-अभियान शुरू किया गया है।

पिथौरागढ़ से समाचार मिला है कि जिले के विभिन्न आयोजनों के अवसर पर सर्वोदय-साहित्य की दो हजार रुपये की बिक्री हुई।

वाराणसी जिलादान-अभियान

२० दिसम्बर को विनोबाजी इलाहाबाद आ रहे हैं, इसलिए इसको सुअवसर मानकर वाराणसी जिले के कार्यकर्ताओं ने निश्चय किया कि जिले में सघन और व्यापक अभियान चलाकर जिलादान का प्रयत्न किया जाय। इस निश्चयानुसार सेवापुरी में १–२ दिसम्बर को एक द्विदिवसीय शिविर का आयोजन हुआ और २ दिसम्बर की शाम से कार्यकर्ता अपने-अपने क्षेत्र में ग्रामदान के काम में जुट गये। कुल ९५ कार्यकर्ता इस अभियान में शामिल हैं। आशा है, शीघ्र ही ५५ कार्यकर्ता और शामिल होंगे।

अब तक वाराणसी जिले के २२ विकास-खण्डों में से ११ प्रखण्डों का दान हो चुका है। शेष ११ प्रखण्डों का दान निश्चय ही २० दिसम्बर तक पूरा हो जायेगा।

गया जिलादान अभियान की प्रगति

(२७ नवम्बर '६८ तक)

औरंगाबाद अनुमंडल के गोह और सदर अनुमंडल के कोंच और आमस प्रखंड का प्रखंडदान २६ नवम्बर '६८ को घोषित हो जाने के बाद अब तक गया जिले के कुल ४६ प्रखंडों में से २५ प्रखंडदान हो चुके। इस तरह नवादा अनुमंडल के १०, सदर के ८ और औरंगाबाद के ७, इस तरह २५ प्रखंडों का दान हुआ। शेष २१ प्रखंडों का प्रखंडदान संपन्न कराने हेतु ग्राम निर्माण मंडल के प्रधानमंत्री श्री त्रिपुरारि शरण, जिला सर्वोदय-मंडल के संयोजक श्री दिवाकरजी, जिला शिक्षा-पदाधिकारी पं० भागवत मिश्र सक्रिय हैं। जहानाबाद अनुमंडल दान कराने हेतु पटना के सर्वश्री विद्यासागरजी, बजरंगी प्र० सिंह और केशव मिश्र कार्य में लगे हैं।

खादी समिति गया के मंत्री श्री गीता प्रसाद सिंह अर्थ-संग्रह का कार्य सहयोगियों के साथ कर रहे हैं। —केशव मिश्र

अ० भा० शान्ति-सेना प्रशिक्षक प्रशिक्षण-शिविर

अ० भा० शान्ति-सेना मण्डल के तत्त्वावधान में चौथा अखिल भारतीय शान्ति-सेना प्रशिक्षक-प्रशिक्षण-शिविर का आरम्भ शान्ति-केन्द्र, राजघाट, वाराणसी में २५ नवम्बर, १९६८ से हो गया है। इसका समापन १५ दिसम्बर, १९६८ को होगा। देश के लगभग सभी भागों से आये हुए वर्तमान समय में प्रशिक्षण-कार्य कर रहे तथा भविष्य में यह कार्य करने की भावना रखनेवाले ४० शिविरार्थी भाग ले रहे हैं।

गांधी-दर्शन, सर्वोदय-आन्दोलन और शान्ति-सेना आदि विषयों के साथ-साथ भारत सहित अनेक देशों में हुई क्रान्तियों के विभिन्न पहलुओं पर भाषण और चर्चा इस शिविर के मुख्य आकर्षण हैं। शिविर को सर्वश्री जयप्रकाश नारायण, दादा धर्माधिकारी, नवकृष्ण चौधरी तथा अन्य विद्वानों के भाषणों का लाभ प्राप्त होगा।

पंजाब, हरियाणा तथा हिमाचल में ग्रामदान और प्रखण्डदान

(३१ अक्तूबर '६८ तक)

प्रदेश	जिला	ग्रामदान	प्रखण्डदान
हिमाचल प्रदेश :			
	कांगड़ा	८७३	–
	महासू	३१५	–
पंजाब :			
	फीरोजपुर	१९०	–
	भटिण्डा	८३	–
	जालन्धर	१७५	१
	कपूरथला	५४	–
	लुधियाना	१८	–
	होशियारपुर	२६२	१
	गुरुदासपुर	४२३	२
हरियाणा :			
	हिसार	१९३	–
	रोहतक	२१३	२
	करनाल	५२४	१
	जींद	२२	–
	अम्बाला	३४९	–
	कुल :	३,६९४	७

—ओम्प्रकाश त्रिखा
१६–डी, चण्डीगढ़–१७

श्री धीरेन्द्र भाई का उत्तर प्रदेश में दिसम्बर माह का कार्यक्रम

तारीख	स्थान	पता
९–१०	अलीगढ़	श्री गांधी आश्रम, मोतीगंज, आगरा
११ से १४	आगरा	,,
१५–१६	कानपुर	गांधी-विचार केन्द्र, १५।२३९, सिविल लाइन्स, कानपुर–१
१७–१८	फैजाबाद	श्री गांधी आश्रम, फैजाबाद
१९ से २२	वाराणसी	सर्व सेवा संघ प्रकाशन, वाराणसी-१
२३–२४	आजमगढ़	श्री गांधी आश्रम, मगहर, जि० बस्ती
२५ से २७	मगहर	,,
२८ से ३०	गोरखपुर	श्री गांधी आश्रम, गोलघर, गोरखपुर

—कपिल अवस्थी

बिहार में भूमि-वितरण

बिहार में भूदान में कुल २१,२७,४५२ एकड़ जमीन दान-स्वरूप प्राप्त हुई है। ऐसा अनुमान है कि इसमें लगभग १०·५ लाख एकड़ जमीन खेती के योग्य नहीं है और लगभग ३·५६ लाख एकड़ जमीन का वितरण हो चुका है। भूदान-यज्ञ कमिटी बाकी कृषि योग्य जमीन की जाँच-पड़ताल कर शीघ्र वितरण कराने के लिए पूर्ण सचेष्ट है और इसके लिए उनके द्वारा विभिन्न जिलोंमें भू-वितरण टोलियों की नियुक्ति की गयी हैं।

आवश्यक सूचना

"भूदान-यज्ञ" के १८ नवम्बर '६८ के अंक का परिशिष्ट "गाँव की बात" जो मध्यावधि चुनाव परिशिष्टांक था, वह दो रंगों में दुबारा छपा है। आशा है, जिन राज्यों में मध्यावधि चुनाव हो रहे हैं, उन राज्यों के मतदाताओं तक इस विशेष अंक को पहुँचाने की कोशिश की जायेगी। जो साथी मँगाना चाहें, वे २० पैसे प्रति अंक की दर से मँगा सकते हैं।

इस विशिष्टांक की सामग्री उर्दू में भी "भूदान तहरीक" पाक्षिक में प्राप्य है। एक अंक की कीमत २० पैसे। —व्यवस्थापक

नये प्रकाशन

- **अध्यात्मतत्त्व सुधा** —विनोबा
  विनोबाजी के अध्यात्म-विषयक विचारों का संकलन। मूल्य २.००
- **बापू के चरणों में!** —विनोबा
  गांधीजी के सम्बन्ध में विनोबाजी के विचारों का संकलन। मूल्य १.२५
- **बापू की मीठी-मीठी बातें** —साने गुरुजी
  मराठी के कोमल-करुण कलाकार और बालकों के हृदय को स्पर्श करनेवाले मनीषी लेखक की कथात्मक बानगी। मूल्य १.२५
- **भारतीय तरुण शांति-सेना**
  तरुणों में राष्ट्रीय चेतना, शांति-स्थापना और देश के लिए कर्मनिष्ठा जगाने, उनमें अनुशासन पैदा करने, निर्भयता तथा जिम्मेदारी की भावना भरने की दृष्टि से यह संगठन उनका अपना है। पुस्तक में तत्सम्बन्धी आचार-संहिता आदि की जानकारी है। मूल्य ४० पैसे

सर्व सेवा संघ प्रकाशन, राजघाट, वाराणसी–१

सम्पादक के नाम पत्र :

महोदय,

इन दिनों सर्वत्र गांधी जन्म-शताब्दी मनाने की धूम है। इस ऐतिहासिक अवधि में क्या अपनी सरकार कम-से-कम इतना भी नहीं कर सकती है कि सरकारी-अर्द्धसरकारी पदाधिकारियों को सब समय नहीं तो कार्य (ड्यूटी) के वक्त खादी पहनना अनिवार्य कर दे? बहुत-सारे कार्यक्रम बनाये गये हैं, किन्तु खादी (वस्त्र) की खपत एवं व्यापक प्रचार के बारे में कोई सक्रिय योजना नहीं है। मेरा विचार है, इतना नहीं तो इस साल से, यानी गांधी-जयन्ती '६८ से अब नौकरी पानेवाले को खादी पहनना लाजिमी कर दिया जाय, तो इस वर्ष में गांधीजी की जन्म-शताब्दी का यह एक बुनियादी महत्त्वपूर्ण शुभ कार्य होगा।

हो सकता है, इसके कानूनी रूप लेने में देर लगे। गांधी जन्म-शताब्दी के अन्त तक भी अनिवार्य खादी का कानून बन जाय तो अन्त भला तो सब भला के अनुसार समझा जायगा कि अपने देश ने सही रूप से यह समारोह मनाया।

आशा है, सर्वोदयवाले, सेवा करनेवाले, सरकारवाले और अधिकारवाले इस ओर ध्यान देंगे। —फूलमणि

विष्णुपुर, मुंगेर, १४–११–'६८

खादी और ग्रामोद्योग राष्ट्र की अर्थव्यवस्था की रीढ़ हैं

इनके सम्बन्ध में पूरी जानकारी के लिए

खादी ग्रामोद्योग पढ़िये **जागृति**

(मासिक) (पाक्षिक)

(संपादक—जगदीश नारायण वर्मा)

हिन्दी और अंग्रेजी में समानांतर प्रकाशित

प्रकाशन का चौदहवाँ वर्ष।
विश्वस्त जानकारी के आधार पर ग्राम विकास की समस्याओं और सम्भाव्यताओं पर चर्चा करनेवाली पत्रिका। खादी और ग्रामोद्योग के अतिरिक्त ग्रामीण उद्योगीकरण की सम्भावनाओं तथा शहरीकरण के प्रसार पर मुक्त विचार-विमर्श का माध्यम।
ग्रामीण धंधों के उत्पादनों में उन्नत माध्यमिक तकनालाजी के संयोजन व अनुसंधान-कार्यों की जानकारी देनेवाली मासिक पत्रिका।

वार्षिक शुल्क : २ रुपये ५० पैसे
एक अंक : २५ पैसे

प्रकाशन का बारहवाँ वर्ष।
खादी और ग्रामोद्योग कार्यक्रमों सम्बन्धी ताजे समाचार तथा ग्रामीण योजनाओं की प्रगति का मौलिक विवरण देनेवाला समाचार पाक्षिक। ग्राम-विकास की समस्याओं पर ध्यान केन्द्रित करनेवाला समाचार-पत्र।

गाँवों में उन्नति से सम्बन्धित विषयों पर मुक्त विचार-विमर्श का माध्यम।

वार्षिक शुल्क : ४ रुपये
एक प्रति : २० पैसे

अंक-प्राप्ति के लिए लिखें

"प्रचार निर्देशालय"

खादी और ग्रामोद्योग कमीशन, 'ग्रामोदय'

इर्ला रोड, विलेपार्ले (पश्चिम), बम्बई–५६ एएस

बिहारदान की वर्तमान स्थिति

पटना २ दिसम्बर '६८। बिहार ग्रामदान-प्राप्ति संयोजन समिति के सहमंत्री कैलाश प्रसाद शर्मा ने हमारे विशेष प्रतिनिधि को बिहारदान की अद्यतन जानकारी देते हुए बताया :

गया में बाबा ने पलामू की ओर जाते समय कहा था कि ३ दिसम्बर '६८ तक गया का काम पूरा नहीं हुआ तो "बाबा तय करेगा कि उसे आगे गया में तप करना है।" बाबा की इस घोषणा ने गया के साथियों को जी-जान से जुट जाने की प्रेरणा दी है। और उम्मीद है कि निर्धारित समय के अन्दर काम पूरा हो जायगा। कुछ थोड़ा-बहुत बाकी रहा तो वह भी जल्द ही पूरा हो जायगा।

पलामू के २५ प्रखण्डों में से १५ अब तक की जानकारी के अनुसार दान हो चुके हैं। रामनन्दन बाबू ने अपनी पूरी शक्ति वहाँ लगायी है, परमेश्वरी दत्त झा तो लगे ही हैं। सरकारी कर्मचारी और शिक्षक अधिक सक्रिय हुए हैं।

शाहाबाद में कुछ भी काम नहीं था। कुल ४९ प्रखण्डों में से सिर्फ २ प्रखण्ड हुए थे। लेकिन अभी २८ नवम्बर '६८ को वहाँ एक बैठक हुई थी, जिसके आधार पर कहा जा सकता है कि २५ दिसम्बर '६८ तक शाहाबाद का जिलादान अवश्य हो जायगा। कई स्थानीय सक्षम लोग सक्रिय हो गये हैं। जिला-स्तर पर संयोजन करने के लिए हरिकृष्ण ठाकुर के अलावा राधामोहन राय, और विष्णुदेव मिश्र दौड़-धूप कर रहे हैं। सासाराम के दो व्यक्ति—रामविलास सिंह, एक स्थानीय सम्पन्न किसान और रामरसिक दीक्षित, प्राचार्य, तकिया हायर सेकेंडरी स्कूल, बहुत सबल सहयोगी मिले हैं। उन्होंने अभियान-खर्च के अलावा विनोबा को २५ हजार रुपये की थैली देने का भी संकल्प किया है। रामविलास सिंह में तो सबको आन्दोलन में समाहित कर लेने की अद्भुत क्षमता है। वही सासाराम अनुमण्डल ग्रामदान प्राप्ति समिति के संयोजक भी हैं। अन्य अनुमण्डलों में—आरा में देवसिंह शर्मा, बक्सर में रामेश्वर राय, और भभुआ में किशोरीजी, लगे हैं। हर प्रखण्ड में काम को गति देने के लिए प्रभारी नियुक्त हुए हैं, शिक्षा-पदाधिकारी की ओर से शिक्षकों को इस काम में लगने की प्रेरणा मिल रही है।

शाहाबाद जिले की ओर से १ लाख रुपये की थैली बाबा को समर्पित करने की कोशिश चल रही है। विनोबा-स्वागत समिति की अध्यक्षता जगजीवन राम (केन्द्रीय खाद्य मंत्री) ने स्वीकार की है।

मुंगेर में १३ प्रखण्ड बाकी हैं। अभियान चल रहा है, और २५ दिसम्बर '६८ तक जिलादान पूरा हो जायगा।

धनबाद का काम आधा हो चुका है। कुल १० प्रखण्डों में से ५ प्रखण्ड दान हो चुके हैं। बिहार ग्रामदान-प्राप्ति समिति की ओर से कमल नारायणजी वहाँ जी-जान से लगे हैं। गोपाल झा शास्त्री के भी दौरे हुए हैं। हजारीबाग से श्याम प्रकाशजी भी मदद में पहुंच गये हैं ११ दिसम्बर '६८ को वहाँ जे० पी० का कार्यक्रम रखा है। मजदूरों की ओर से उनको ५१ हजार रु० की थैली समर्पित की जायगी। पूरी सम्भावना है कि उस समय तक जिलादान भी हो जायगा।

सिंहभूमि में काम गति से शुरू हुआ है। शिक्षकों की शक्ति हासिल करने के लिए प्रखण्ड-स्तरीय गोष्ठियाँ आयोजित की जा रही हैं। इसमें एक दुखद व्यवधान अचानक एक जीप-दुर्घटना के रूप में आ पड़ा है। ऐसे ही एक शिविर में भाग लेने के लिए जाते समय जिले के प्रमुख कार्यकर्ता श्याम बहादुर सिंह, बिहार खादी-ग्रामोद्योग संघ के क्षेत्रीय संचालक पंचानन्द सिंह तथा अनुमण्डलीय शिक्षा-पदाधिकारी दुर्घटनाग्रस्त हो गये हैं। ताजी जानकारी के अनुसार तीनों व्यक्ति खतरे से बाहर हैं, लेकिन श्यामबहादुरजी की एक बाँह में 'फ्रैक्चर' हो गया है।

पटना को तूफान की हवा अभी तक झकझोर नहीं पायी है। लेकिन बाबा वहाँ २५ दिसम्बर '६८ को पहुंच रहे हैं। और उन्होंने कह दिया है कि पटना का काम जल्द-से-जल्द पूरा करना ही है। पटना के प्रमुख कार्यकर्ता विद्यासागरजी संयोजन में लग गये हैं। ऐसा सोचा जा रहा है कि पटना जिले में चुनाव की आँधी के समानान्तर ग्रामदान का तूफान भी चलाया जाय।

आगामी १८ दिसम्बर '६८ को पटना में अब तक हो चुके जिलादानी जिलों के प्रमुख कार्यकर्ताओं की एक सभा बुलायी गयी है। मध्यावधि चुनाव के समय इन जिलों में सर्व सेवा संघ द्वारा निर्धारित नीति के अनुसार सक्रिय रूप से मतदाता-शिक्षण का काम इस सभा की चर्चा और संयोजन का मुख्य विषय होगा। ८ दिसम्बर को प्रदेश के तटस्थ और प्रमुख नागरिकों की एक बैठक जे० पी० के आमंत्रण पर होने जा रही है। इस बैठक में भाग लेनेवालों की ओर से मतदाताओं के नाम एक अपील प्रसारित की जायगी। दूसरे दिन, ९ दिसम्बर '६८ को सभी राजनीतिक दलों की भी एक बैठक बुलायी जा रही है, जिसमें चुनाव के समय आचार-संहिता के पालन पर हर दल के नेता जोर दें, इसका प्रयास होगा।०

बिहारदान-अभियान में

दो कार्यकर्ता निरन्तर अभियान-टोलियों तक ग्रामदान-पत्र पहुँचाने का काम कर रहे हैं। गोदाम भर गये हैं; तो अब दान-पत्रों के बण्डल गैराज और बरामदे में रखने पड़ रहे हैं। ऐसी जानकारी दी बिहार भूदान कमेटी के मंत्री निर्मलचन्द्र ने हमारे प्रतिनिधि को दानपत्रों के ढेर दिखाते हुए।

पठनीय **नयी तालीम** मननीय

शैक्षिक क्रांति का अग्रदूत मासिकी

वार्षिक मूल्य : ६ रु०

सर्व सेवा संघ प्रकाशन, वाराणसी-१

वार्षिक शुल्क : १० रु०; विदेश में २० रु०; या २५ शिलिंग या ३ डालर। एक प्रति : २० पैसे।

श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए प्रकाशित एवं इण्डियन प्रेस (प्रा०) लि० वाराणसी में मुद्रित।